अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-38, अंक-20, 1-15 जून 2015

यह सम्पूर्ण क्रांति है मित्रों

दूर... बहुत दूर जाना है

पटना गांधी मैदान - 5 जून, 1974

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 38, अंक : 20, 1-15 जून, 2015

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

कार्यकारी संपादक
अशोक मोती
मो. : 7488387174

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह **भवानी शंकर 'कुसुम'**
बिमल कुमार **अशोक मोती**

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	**:**	**2000 रुपये**
आधा पृष्ठ	**:**	**1000 रुपये**
चौथाई पृष्ठ	**:**	**500 रुपये**

इस अंक में...

1. सर्वोदय और संपूर्ण क्रांति... 2
2. 5 जून का भाषण : जेपी की... 3
3. यह संपूर्ण क्रांति है मित्रो!... 4
4. संपूर्ण क्रांति क्या, क्यों और कैसे?... 7
5. सर्वोदय एवं संपूर्ण क्रांति... 11
6. संपूर्ण क्रांति और लोकनायक... 13
7. संपूर्ण क्रांति एवं वर्ग-संघर्ष... 15
8. संपूर्ण क्रांति के कारण पिछड़ों... 17
9. संपूर्ण क्रांति का अर्थ... 19
10. कविताएं एवं नारे... 20

'सर्वोदय जगत' में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनके साथ सर्व सेवा संघ या संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

संपादकीय

सर्वोदय और संपूर्ण क्रांति

सर्वोदय आंदोलन को अधिक विस्तारित एवं समग्रता के साथ व्याख्यायित करने का ऐतिहासिक दायित्व संपूर्ण क्रांति आंदोलन ने निभाया।

आजादी के बाद सर्वोदय आंदोलन ने भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन के माध्यम से लोकशक्ति निर्माण एवं ग्रामस्वराज्य की स्थापना की दिशा में कार्य किया था। उस दौर में लोकशक्ति निर्माण के कार्य में राजसत्ता के साथ टकराव की आवश्यकता नहीं पड़ी थी, क्योंकि राजसत्ता से जुड़े लोग गांधी-विचार का सम्मान करते थे। वे राष्ट्र-निर्माण में राजशक्ति तथा लोकशक्ति दोनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते थे।

लेकिन राजसत्ता में धीरे-धीरे ऐसे लोग आते चले गये, जो न तो स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े थे और न ही गांधी-विचार से प्रेरणा पाते थे। लोकशक्ति के निर्माण का कार्य उनके सत्ता संचालन में बाधक बनने लगा था। ऐसे में लोकशक्ति का राजसत्ता के साथ टकराव अपरिहार्य हो गया। उन तमाम क्षेत्रों में जहां लोकसत्ता के अधिष्ठान का निर्माण होना था, उनमें राजसत्ता ने अपना दखल बढ़ाना शुरू कर दिया था तथा उन क्षेत्रों में ही राजसत्ता अपना वर्चस्व कायम करने की दिशा में प्रयत्नशील हो गयी थी।

ऐसे में लोकशक्ति निर्माण के कार्य में सत्याग्रह के तत्त्व को पुनः दाखिल किया गया। इतना ही नहीं, लोकशक्ति निर्माण के आंदोलन ने उन क्षेत्रों को पुनः रेखांकित किया, जिन सारे क्षेत्रों में लोकसत्ता को पुनः अपने दायरे में लाना था। लोकशक्ति द्वारा समग्र परिवर्तन की इस दृष्टि को ही जेपी ने 'संपूर्ण क्रांति' का नाम दिया।

संपूर्ण क्रांति आंदोलन के कई प्रकार के प्रभाव बाद के काल में देखने को मिले। एक तो यह कि तमाम परितर्वनकारी आंदोलन राजनीतिक दलों के दायरे के बाहर हुए। यह बात अलग है कि उन लोक-आंदोलनों की ऊर्जा का लाभ उठाकर कुछ लोग बजाय लोक-संगठन बनाने के या बजाय लोकसत्ता की स्थापना में उस ऊर्जा का इस्तेमाल करने के, स्वयं राजसत्ता में चले गये।

संपूर्ण क्रांति आंदोलन का दूसरा बड़ा प्रभाव यह हुआ कि समाज जातीय समानता की ओर बढ़ा। जातियों के बीच की गैर-बराबरी कम होना शुरू हो गयी। लेकिन दुर्भाग्य यह रहा कि हम जातीय व्यवस्था खत्म करने की ओर नहीं बढ़ सके। हमारा अनुमान है कि यदि लोक संगठनों का निर्माण हुआ, तो हम जातीय व्यवस्था खत्म करने की ओर भी बढ़ पाते। लोक संगठनों के अभाव में दलित तथा पिछड़े समूहों ने, राजनीतिक सत्ता में अपनी भागीदारी को बढ़ाने का कार्य किया। सामाजिक समानता का अभियान, राजनैतिक अधिकारिता प्राप्ति के प्रयत्नों के रूप में प्रकट हुआ।

सन् 1991 के बाद संपूर्ण क्रांति आंदोलन की विरासत में एक और प्रकार का आंदोलन जुड़ गया। वह था वैश्विक पूंजीवादी बाजार और वैश्विक पूंजी द्वारा शोषण व दोहन का विरोध। आज जल-जंगल-जमीन व खनिज सभी प्रकृति प्रदत्त जीवन आधार वैश्विक पूंजीवादी बाजार के माध्यम से दोहन के शिकार हो रहे हैं तथा इनपर जीने वाले या तो विस्थापित हो रहे हैं या उनके श्रम का मूल्य न्यूनतम रखा जा रहा है। राजसत्ता वैश्विक पूंजीवादी बाजार की चोरी की तरह काम कर रही है। ऐसे में लोकसत्ता निर्माण के कार्य से जुड़े आंदोलनकारियों पर एक और जिम्मेदारी आ गयी है। वह है देश की सम्प्रभुता बचाने की।

बिमल कुमार

5 जून 1974 - 5 जून 2015
समर्पण दिवस की 41वीं वर्षगांठ

5 जून का भाषण : जेपी की आत्मकथा

5 जून 1974 के मीलों लंबे जुलूस और पटना के गांधी मैदान में उस विशाल ऐतिहासिक सभा का साक्षी रहा हूं। ईश्वर की यह असीम कृपा रही कि इस मंच से उस दिन संपूर्ण क्रांति की घोषणा के पूर्व 'संपूर्ण क्रांति अब नारा है, भावी इतिहास हमारा है' क्रांति गीत गाने का मुझे सौभाग्य मिला।

यह सही है कि जेपी ने 5 जून के पटना के गांधी मैदान में 74 के छात्र आंदोलन को संपूर्ण क्रांति आंदोलन की संज्ञा दी थी किन्तु इसे बहुत परिभाषित नहीं किया था। जेपी ने आज के अपने भाषण में संघर्ष से संबंधित विभिन्न संगठनों, छात्र नेताओं तथा प्रमुख व्यक्तियों से परामर्श करके जो आठ कार्यक्रम निश्चित किये थे उन्हीं की घोषणा अपने भाषण में की थी। तथापि इस ऐतिहासिक भाषण को यहां प्रस्तुत करने का मूल उद्देश्य यह है कि जेपी ने पूरी दुनिया को अपने मुखारबिन्द से अपनी आत्मकथा इस भाषण में सुनाई, जो उनके जीवन, कर्तव्य और पुरुषार्थ की आत्मकथा है। आजादी की लड़ाई से नेहरू शासन और फिर उनकी बेटी इंदिरा गांधी से हो रहे मतभेद की यह हृदयस्पर्शी कथा है।

आज के भाषण में जेपी का हृदय भरा हुआ था। एक-एक शब्द में जैसे उनकी करुणा और शायद दर्द भी बाहर निकल रहा हो। जनता की पीड़ा जैसे जेपी के मुख से मुखरित हो रही हो। आखिर जेपी मर्माहत क्यों थे? उन्हें देशवासियों से अपनी आत्मकथा, वह भी रूंधे गले से क्यों सुनानी पड़ी?

पटना वासियों को 3 जून को कतिपय अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण नारे पटना की सड़कों पर सुनाई पड़े, जिसपर उन्हें जरा भी विश्वास नहीं हुआ। लगभग 30 हजार की संख्या में लाल झंडे के साथ तीर-कमान, बल्लम, फरशा एवं अन्य घातक हथियारों के साथ नारे लगाये गये थे—जयप्रकाश मुर्दाबाद / अमेरिका को दे दो तार, जयप्रकाश की हो गयी हार / जयप्रकाश पर हमला बोल, हमला बोल, हमला बोल। इन्हीं आरोपों से जेपी का मन भरा हुआ था और यही कारण है कि उन्हें अपने इस भाषण में अपनी आत्मकथा अपने मुख से पूरी दुनिया को सुनानी पड़ी। जेपी के मंच से क्रांति गीत गाने और उनके सचिवालय से जुड़े रहने के कारण उनकी यात्रा में बिहार एवं बिहार के बाहर भी जाने और उन्हें सुनने का मौका मिला। लेकिन 5 जून के भाषण में जेपी की आवाज में लोगों को बांध लेने और लोगों को उत्प्रेरित करने का जो अद्‌भुत प्रभाव दिखा, वह अन्यत्र नहीं दिखा। इस भाषण में देश नहीं तो कम-से-कम बिहार वासियों के दिलों को तो जेपी ने झकझोर कर रख ही दिया था। जनता की दुखती रग पर जेपी ने अपनी ऊंगली रख दी थी। जेपी ने कहा—मौर्य के जमाने से लेकर अंतिम गुप्त के जमाने तक यानी एक हजार वर्ष तक भारत का इतिहास बिहार का इतिहास और बिहार का इतिहास भारत का इतिहास था। सत्ता पर टिप्पणी करते हुए पूछा—बिहार की जमीन सबसे उपजाऊ, इतनी नदियां, खनिज के प्रचुर भंडार के बावजूद बिहार सबसे गरीब और पिछड़ा प्रदेश क्यों है? खेती, उद्योग के विकास के लिए क्या किया? कहा—शर्म नहीं आती, लज्जा नहीं आती इन लोगों को, जो हुकूमत की कुर्सियों पर बैठे हैं? खुद के लिए जमीन खरीदे, बंगले बनाये लेकिन जनता के विकास के लिए क्या किया?

जेपी के इस भाषण ने उनकी सुदृढ़ व सूक्ष्म व्यूह-रचना को भी प्रदर्शित किया। जेपी ने दमनकारी पुलिस को भी संबोधित करते हुए बताया कि यह जो जन संघर्ष है वह पुलिस वालों का भी है और व्यापक क्रांति में उनका भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने व्यूह-रचना के हिसाब से यह भी कहा कि सरकार को अपनी पुलिस पर भरोसा नहीं है। इसी अवसर पर उन्होंने अपने समाजवादी मित्र पं. रामानन्द तिवारी को निर्देश दिया कि वे पुलिस के बैरकों में जायें और उन्हें वे समझाने का काम करें।

उनके अभिभाषण के ये शब्द...तो मित्रो! जो कुछ मैंने आपसे कहा, सब अगर समझा है आपने, तो यह ध्यान में आया होगा कि यह 'संपूर्ण क्रांति का आंदोलन' है।...हमें दूर...बहुत दूर जाना है। लोकनायक जेपी के इन शब्दों ने हर सुनने वालों के हृदय को प्रेरणा से जैसे भर दिया था। निःसंदेह ऐसा प्रभाव उसी व्यक्ति की वाणी में होता है, जो अपने जीवन को जनता के जीवन से मिला देता है और जो पल-पल क्रांति में ही जीता है।

दरअसल 5 जून 1974 समर्पण का दिन था, जिसकी आज 5 जून, 2015 को 41वीं वर्षगांठ है। यह अवसर है स्वयं एवं समूह दोनों के लिए मूल्यांकन करने का कि हमने संपूर्ण क्रांति के लिए जो 1974 में समर्पण किया अकेले भी और सामूहिक रूप से भी उसके प्रति हम कितने वफादार और सजग रहे।

कहा जाता है कि क्रांतिकारियों का सदैव यह दुर्भाग्य रहा है कि साथ ही साथ मरने को तैयार तो रहते हैं किन्तु ये साथ जी नहीं पाते। एक दूसरे से बड़ा बनने की कोशिश में एक दूसरे को नीचा दिखाना, अपने प्रति उदार और दूसरों के प्रति कठोरता बरतना, पद और थोथी प्रतिष्ठा के पीछे दौड़ना, छोटी-छोटी बातों पर उबल पड़ना, परस्पर अविश्वास रखना, जीवन में परस्पर पारदर्शिता न रखना आदि ऐसे वायरस हैं जो सामूहिक शक्ति और समर्पण को भीतर ही भीतर भ्रष्ट और नष्ट कर देते हैं।

अतः 5 जून के समर्पण दिवस के अवसर पर हम पुनः अपना मूल्यांकन कर, अपने आपको बदल डालने और अपने संकल्प और समर्पण को नया कर देने का संकल्प करें।

- अशोक मोती

5 जून 1974 : जेपी का ऐतिहासिक भाषण

यह संपूर्ण क्रांति है मित्रो!

दूर...बहुत दूर जाना है!

❑ जयप्रकाश नारायण

बिहार प्रदेश छात्र-संघर्ष समिति के मेरे युवक साथियो, बिहार प्रदेश के असंख्य नागरिक भाइयो और बहनो!

अभी-अभी रेणुजी ने जो कविता पढ़ी, अनुरोध तो वास्तव में उनका था, सुनाना तो वह चाहते थे; मुझसे पूछा गया कि वह कविता सुना दें या नहीं; मैंने स्वीकार किया। लेकिन उसने बहुत सारी स्मृतियों, और अभी हाल की मैंने बहुत दुःखद स्मृति को जागृत कर दिया है। इससे हृदय भर उठा है। आपको शायद मालूम न होगा कि जब मैं वेल्लोर अस्पताल के लिए रवाना हुआ था, तो जाते समय मद्रास में दो दिन अपने मित्र श्री ईश्वर अय्यर के साथ रुका था। वहां दिनकरजी, गंगाबाबू मिलने आये थे। बल्कि, गंगाबाबू तो साथ ही रहते थे। और दिनकरजी बड़े प्रसन्न दीखे। उन्होंने अभी हाल की अपनी कुछ कविताएं सुनायीं और मुझसे कहा कि आपने जो कुछ आंदोलन शुरू किया है, जितने मेरी आशाएं आपसे लगी थीं, उन सबकी पूर्ति, आपके इस आंदोलन में, इस नये आह्वान में, देश के तरुणों का आपने जो किया है, मैं देखता हूं। (तालियां) तालियां हरगिज न बजाइये, मेरी बात चुपचाप सुनिये।

दूर जाना है...बहुत दूर जाना है

अब मेरे मुंह से आप हुंकार नहीं सुनेंगे। लेकिन जो कुछ विचार मैं आपसे कहूंगा वे विचार हुंकारों से भरे होंगे। क्रांतिकारी वे विचार होंगे, जिन पर अमल करना आसान नहीं होगा। अमल करने के लिए बलिदान करना होगा, कष्ट सहना होगा, गोली और लाठियों का सामना करना होगा, जेलों को भरना होगा। जमीनों की कुर्कियां होंगी। यह सब होगा। **यह क्रांति है मित्रो और संपूर्ण क्रांति है। यह कोई विधान-सभा के विघटन का ही आंदोलन नहीं है। वह तो एक मंजिल है जो रास्ते में है। दूर जाना है, दूर जाना है। जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में—अभी न जाने कितने मीलों इस देश की जनता को जाना है उस स्वराज्य को प्राप्त करने के लिए, जिसके लिए देश के हजारों-लाखों जवानों ने कुर्बानियां की हैं;** जिसके लिए सरदार भगतसिंह, उनके साथी, बंगाल के

सारे क्रांतिकारी साथी, महाराष्ट्र के साथी, देशभर के क्रांतिकारी साथी गोली के निशाना बने, या तो फाँसियों पर लटकाये गये; जिस स्वराज्य के लिए लाखों-लाख देश की जनता बार-बार जेलों को भरती रही है। लेकिन आज सत्ताइस-अट्ठाइस वर्ष के बाद का जो स्वराज्य है, (उसमें) जनता कराह रही है! भूख है, महँगाई है, भ्रष्टाचार है, कोई काम नहीं जनता का निकलता है बगैर रिश्वत दिये। सरकारी दफ्तरों में, बैंकों में, हर जगह; टिकट लेना है उसमें, जहां भी हो, रिश्वत के बगैर काम नहीं जनता का होता। हर प्रकार के अन्याय के नीचे जनता दब रही है। शिक्षा-संस्थाएं भ्रष्ट हो रही हैं। हजारों नौजवानों का भविष्य अँधेरे में पड़ा हुआ है। जीवन उनका नष्ट हो रहा है। इस प्रकार की शिक्षा दी जाती है—गुलामी की शिक्षा, कलम घिसने की शिक्षा। शिक्षा पाकर दर-दर ठोकरें खाना नौकरी के लिए। नौकरियां मिलती नहीं। दिन-पर-दिन बेरोजगारी बढ़ती जाती है। गरीब की बेरोजगारी बढ़ती जाती है। 'गरीबी हटाओ' के नारे जरूर लगते हैं, लेकिन गरीबी बढ़ी है पिछले वर्षों में। भूमिहीनता मिटाने के लिए सीलिंग के कानून, दूसरे कानून बने हैं, लेकिन ज्यादा आज भूमिहीन हैं पहले के मुकाबले में। जमीनें छिन गयी हैं, छोटे-छोटे गरीब किसानों की।

तो मित्रो! आज की स्थिति यह है। और इस स्थिति में वहां (मद्रास में) दिनकरजी ने जो कुछ हमें अपने शब्द सुनाये, बड़े हृदयग्राही थे। और उसी रात जब बिदा हुए—उसी रात को—हमारे मित्र रामनाथजी गोयनका (इंडियन एक्सप्रेस' के मालिक) के घर पर वह मेहमान थे। रात को दिल का दौरा पड़ा, तीन मिनट में उनको अस्पताल पहुंचाया गोयनकाजी ने, तीन मिनट में। 'विलिंगडन नर्सिंग होम' शायद उसे कहते हैं। सारा इंतजाम था वहां पर। पटना का अस्पताल तो...पता नहीं तीन घंटे में भी तैयार न हो पाता। सभी डॉक्टर सब तरह के औजार लेकर तैयार थे। लेकिन दिनकरजी का हार्ट फिर से जिन्दा नहीं हो पाया। उसी रात उनका निधन हो गया। ऐसी चोट लगी, उनकी यह कविता सुनके; उनका वह सुन्दर सौम्य, जोशीला चेहरा याद आ गया। आज लगता है, हमारे दो मित्रों की कितनी कमी है। आज भाई बेनीपुरीजी होती, उनकी लेखनी में जो ताकत थी, आज के जुलूस का, आज की इस सभा का जो वर्णन वह देते, एक-एक शब्द

में अंगार होते! आज दिनकरजी जो कविता लिखते, नये भारत के नवनिर्माण के लिए, जो देश के युवकों और छात्रों और देश के साधारण व्यक्तियों, नर और नारियों के द्वारा आज से हो रहा है शुरू, प्रारम्भ हो गया है, वह कविता शायद इस नवीन क्रांति का एक अमर साहित्य बन जाती। लेकिन आज दोनों ही नहीं हैं। न दिनकरजी हैं, न बेनीपुरीजी।

तो मित्रो! ये स्मृतियां जगी हैं और इनका भार हृदय पर है। मैं थक गया हूं। इसलिए मैं चला गया था गांधी संग्रहालय। डॉक्टर रहमान और दूसरे डॉक्टरों ने मेरी परीक्षा की, दवा मैंने ली, कुछ आराम किया, कुछ लेटा। खबर ले रहा था कि सब लोग आ गये हैं, बहनें हमारी जुलूस से लौटी कि नहीं? तो खबर मिली कि सब लोग आ गये। तब जीप पर बैठकर मैं आपकी सेवा में पहुंच गया। थोड़ा विलम्ब हुआ, थोड़ा और विलम्ब होगा, क्योंकि मुझे आपसे कुछ बातें कहनी हैं। अपेक्षा लेकर आप आये हैं। हमारे छात्र बंधुओं की अपेक्षा है, प्रदेश की जनता की अपेक्षा है कि आज के इस मंच से जयप्रकाश नारायण कुछ नया कार्यक्रम आगे के लिए देंगे। तो मित्रो, यह कोई मेरा कार्यक्रम नहीं है। मैंने अपने छात्र-बंधुओं से चर्चा की। संचालन समिति में इसकी चर्चा हुई। उनमें से कई लोगों ने लिख के अपने सुझाव भेजे। बुद्धिजीवियों से चर्चा हुई। आचार्य राममूर्तिजी, नारायण भाई, मनमोहन भाई, त्रिपुरारिशरण जिनको, जिन चार अपने वरिष्ठ साथियों को मैं जिम्मा दे गया था कि वे हमारी तरफ से, जो हमारे विचार हैं, उनको ठीक अर्थ में रखते हैं छात्रों के सामने—छात्रों का नेतृत्व करने के लिए नहीं, उनका साथ देने के लिए हमारी तरफ से—उनसे बातें हुईं। सभी चर्चाओं का निचोड़ हमने निकाला है, वह आपके सामने रखूंगा। कोई तफसील का प्रोग्राम नहीं होगा। वह पीछे आयेगा, समय-समय पर तफसील में, विस्तार में किस तारीख से क्या करना है। लेकिन मुख्य-मुख्य बातें आपके सामने रख देता हूं। बहुत सारा कार्यक्रम एक साथ रख दिया जाय, तो आपको याद भी नहीं रहेगा। तो मुख्य बातें आपके सामने आज रखूंगा। आठ बातें मैं कहना चाहता हूं।

जवानी है आपके अंदर, आप नेता बनिये

मैंने आज तक कुछ लिख करके और कुछ लिखित अपने नोटों को देख करके भाषण नहीं किया। बैठ जाता हूं बोलने, जो प्रेरणा होती है, वह बोल देता हूं। कभी अच्छा हो जाता है, कभी फीका हो जाता है। लेकिन आज बड़ी भारी जिम्मेदारी हमारे कंधों पर आयी है और मैंने इस जिम्मेदारी को अपनी तरफ से मांग करके नहीं लिया है। **तरुणों से, छात्रों से बराबर कहता रहा हूं–जब पहला हमने आह्वान किया था 'यूथ फॉर डेमोक्रेसी' (का), लोकतंत्र में युवकों का क्या रोल है, यह हमने जो बताया था, उसमें लिखा था और उसके बार बराबर कहता रहा हूं, संचालन समिति में बहस करता रहा हूं–हम बूढ़े हो गये, हमारी सलाह लीजिये। हम दूसरी पीढ़ी के हो गये। आप नयी पीढ़ी के लोग हैं। देश का भविष्य आपके हाथों में है। उत्साह है आपके अन्दर, शक्ति है आपके अन्दर, जवानी है आपके अन्दर, आप नेता बनिये। मैं आपको सलाह दूंगा। तो छात्रों ने कहा–जयप्रकाशजी, मार्गदर्शन से काम नहीं चलेगा; आपको नेतृत्व स्वीकार करना पड़ेगा। मैं टालता रहा, टालता रहा। लेकिन अंत में (वेल्लोर) जाते समय मैंने उनके आग्रह को स्वीकार किया।** स्वीकार करते समय मैंने अनुभव किया अपनी अयोग्यता का, और नम्रतापूर्वक यह स्वीकार किया। परंतु छात्रों से भी, आप सबसे भी यह अनुरोध है कि नाम के लिए मुझे नेता नहीं बनना है। मुझे सामने खड़े करके और कोई हमें 'डिक्टेट' करे पीछे से कि यह करना है जयप्रकाश नारायण, तुम्हें तो इस नेतृत्व को, कल मैं छोड़ देना चाहूंगा। मैं सबकी सलाह लूंगा—(तालियां) तालियां नहीं, बात सुनिये, बात समझिये—सबकी बात सुनूंगा, छात्रों की बात, जितना भी ज्यादा होगा, जितना भी समय मेरे पास होगा, उनसे बहस करूंगा, समझूंगा और अधिक-से-अधिक उनकी बात मैं स्वीकार करूंगा। आपकी बात स्वीकार करूंगा, जन-संघर्ष समितियों की। लेकिन फैसला मेरा होगा। इस फैसले को इनको मानना होगा और आपको मानना होगा। तब तो इस नेतृत्व का कोई मतलब है, तब तो यह क्रांति सफल हो सकती है। और नहीं, आपस के झगड़ों में, बहसों में, पता नहीं कि हम किधर बिखर जायेंगे और क्या नतीजा निकलेगा।

तो मित्रो, कुछ तो टिप्पणियां मैं करूंगा और कुछ कार्यक्रम आपके सामने रखूंगा। दुर्भाग्य से हिन्दी लिखने का अभ्यास कम है, तो मैंने अपने सेक्रेटरी अब्राहम साहब को डिक्टेट कर दिया था आज सुबह में। (उसे) देखता रहूंगा और आपसे अपनी बातें हिन्दी में कहता रहूंगा।

बेशरम लोग...मुझे गालियां देते हैं!

बहुत दिनों से सार्वजनिक जीवन में हूं। 1921 में, जनवरी के महीने में, इसी पटना कॉलेज में आई. एस-सी. का (मैं) विद्यार्थी था। हमारे साथ, हमारे निकट के साथी थे; वे सब छात्रवृत्ति पाने वाले थे। मुझे भी छात्रवृत्ति मिलती थी। सब अववल दर्जे के, 'क्रीम' थे उस समय के विद्यार्थियों में। और हम सबने एक साथ गांधीजी के आह्वान पर असहयोग किया। असहयोग करने के बाद करीब डेढ़ वर्ष यों ही मेरा जीवन बीता। चूंकि मैं साइन्स का विद्यार्थी था, तो राजेन्द्रबाबू के सचिव या मंत्री या मित्र या जो कहिये—मथुराबाबू—उनके जामाता बाबू फूलदेवसहाय वर्मा थे, उनके पास भेज दिया कि फूलदेव बाबू के साथ रहो और उनकी लेबोरेटरी में, उनकी प्रयोगशाला में कुछ प्रयोग करो और उनसे कुछ सीखो। महामना मदनमोहन मालवीयजी के लिए मेरे हृदय में पूजा का भाव है; परंतु हिन्दू विश्वविद्यालय में भी दाखिल होने के लिए मैं तैयार नहीं था, क्योंकि सरकारी रुपया, सरकारी एड, मदद विश्वविद्यालय को

मिलती थी। स्वतंत्र नहीं था वह, पूर्ण रूप से राष्ट्रीय विद्यालय नहीं था। तो मैं किसी विद्यालय में नहीं गया। बिहार विद्यापीठ में मैंने परीक्षा दी—आई. एस-सी. की। पास तो करना ही था, पास कर गया। उसके बाद बचपन में मैंने—जब हाईस्कूल में था—मैंने स्वामी सत्यदेव के भाषण सुने थे अमेरिका के बारे में। कोई धनी घर का नहीं हूं। थोड़ी-सी खेती और पिताजी नहर विभाग में जिलादार; बाद में रेवेन्यू असिस्टेंट हुए। नन-गजेटेड अफसर थे। उनकी हैसियत नहीं थी कि वह मुझे इंग्लैंड (अमेरिका) भेजें। तो मैंने सुना था कि अमेरिका में खुद मजदूरी करके लड़के पढ़ सकते हैं। मेरी इच्छा यह थी (कि) आगे पढ़ना है मुझे; आंदोलन तो गिराव पर आ गया है; चढ़ाव पर था, उतर चुका है; इस बीच में अमेरिका से कुछ शिक्षा प्राप्त करके आ जाऊं। इसीलिए अमेरिका गया—अमेरिका गया। कुछ लोग हैं जो हमारे—पता नहीं कि उन्हें किस नाम से मैं पुकारूं—मुझे आज वर्षों से गालियां देते रहे हैं। उस दिन तीन तारीख (3 जून 1974) को कितनी गालियां मुझे दी गयी हैं। चूंकि अमेरिका में मैंने पढ़ा, इसलिए मैं अमेरिका का दलाल बना हूं! 'निक्सन को दे दो तार, जयप्रकाश की हो गयी हार', ये नारे लगाये बेशरम लोगों ने।

रूस के गुलाम हो...लेनिन को भूल गये

मित्रो, अमेरिका में बागानों में (मैंने) काम किया, कारखानों में काम किया—लोहे के कारखानों में। **जहां जानवर मारे जाते हैं उन कारखानों में काम किया। जब युनिवर्सिटी में पढ़ता था, छुट्टियों में काम करके इतना कमा लेता था कि कुछ खाना हम तीन-चार विद्यार्थी मिलकर पकाते थे, और सस्ते में हम लोग खा-पी लेते थे। एक कोठरी में कई आदमी मिल के रह लेते थे। रुपया बचा लेते थे, कुछ कपड़े खरीदने, कुछ फीस के लिए। और बाकी हर दिन–रविवार को भी छुट्टी नहीं...एक घंटा रेस्त्रां में, होटल में या तो बर्तन धोया या वेटर का काम किया,** तो शाम को रात का खाना मिल गया, दिन का खाना मिल गया। किराया कहां से मकान का हमको आया? **बराबर दो-तीन लड़के–कितने वर्षों तक दो चारपाई नहीं थी कमरे में–एक चारपाई पर मैं और कोई-न-कोई साथ हमारे अमेरिकन लड़का रहता था; हम दोनों साथ सोते थे। एक रजाई हमारी होती थी। इस गरीबी में मैं पढ़ा हूं। इतवार के दिन या कुछ 'ऑड टाइम' में, यह जो होटल का काम है, उसको छोड़ करके, यह जूते साफ करने का काम 'शू शाइन पार्लर' में, उससे ले करके कमोड साफ करने का काम होटलों में (करता था)। वहां जब बी. ए. पास कर लिया, स्कॉलरशिप मिल गयी; तीन महीने के बाद असिस्टेंट हो गया डिपार्टमेंट का; 'ट्युटोरियल क्लास' लेने लगा तो कुछ आराम से रहा इस बीच में। इन लोगों से पूछिये। मेरा इतिहास ये जानते हैं और जानकर भी मुझे गालियां देते हैं।**

अमेरिका में विसकांसिन में, मैडिसन में मैं घोर कम्युनिस्ट था। घोर मार्क्सवादी बना, स्टालिनवादी नहीं। वह लेनिन का जमाना था, वह ट्राटस्की का जमाना था। 1924 में लेनिन मरे थे, और 1924 में मैं मार्क्सिस्ट बना था। और दावे के साथ कह सकता हूं कि उस समय तक जो भी मार्क्सवाद के ग्रंथ छपे थे अंग्रेजी में, हम लोगों ने पढ़ डाले थे। रात-रात को रोज एक रशियन टेलर था, दर्जी था, उसके यहां हमारे क्लास लगते थे। और **वहां से जब भारत लौटा था, घोर कम्युनिस्ट बनकर लौटा था। लेकिन मैं कांग्रेस में दाखिल हुआ। कम्युनिस्ट पार्टी में क्यों नहीं दाखिल हुआ? वे कहते थे–महात्मा गांधी देश के भांडवलशाहों का, भांडवलदारों का, पूंजीपतियों का दलाल है।** चौपाटी में बम्बई में भाषण हुआ जोगलेकर का, कि गांधी उनका दलाल है—पूंजीपतियों का; यह कांग्रेस पूंजीपतियों की संस्था है। **मैंने जो लेनिन से सीखा था वह यह सीखा था कि जो गुलाम देश हैं, वहां के जो कम्युनिस्ट हैं, उनको हरगिज वहां की आजादी की लड़ाई से अपने को अलग नहीं रखना चाहिए**—यद्यपि उस लड़ाई का नेतृत्व, जिसको मार्क्सिस्ट भाषा में 'बुर्जुआ क्लास' कहते हैं, उस क्लास के हाथ में हो। पूंजीपतियों के हाथ में उसका नेतृत्व हो, फिर भी कम्युनिस्टों से अलग नहीं रहना चाहिए, (अपने को) 'आइसोलेट' नहीं करना चाहिए। उस समय 'मेरठ कॉन्सपिरेसी' (केस) चल रही थी। बड़े लोग जेल में थे, लेकिन खोज-खोजकर, मेंने उनको ढूंढ़ा। घोटे को ढूंढ़ा, मिरजकर को ढूंढ़ा, पी. सी. जोशी को ढूंढ़ा, बहस की इन लोगों से। लंदन में क्लेमेंस दत्त, पाल्मेदत्त के भाई—पाल्मेदत्त बेल्जियम में थे तो उनसे मुलाकात हुई नहीं—'लेबर मंथली' के संपादक और विद्वान, वहां की कम्युनिस्ट पार्टी के ब्रेन (थे)। **क्लेमेंस से कितनी बातें कीं–गलत रास्ता बता रहे हो आप, स्टालिन के गुलाम हो, रूस के गुलाम हो, लेनिन को भूल गये। इसलिए इनके साथ नहीं गया। आजादी की लड़ाई में गद्दारी की इन्होंने। डांगे साहब ने सी. आई. डी. का काम किया। क्यों? रूस 'एलाई' था अमेरिका, इंग्लैंड का। 'पीपुल्स वार' था! हम लड़ रहे थे अपनी आजादी के लिए। गांधीजी जेल में थे। नेहरू जेल में थे और यह लोग गद्दारी किये हुए थे, उस जमाने में। हमें कहते हैं यह लोग!**

तो मित्रो, यह तो कहने वाला नहीं था। यह आठ में से प्वाइंट नहीं था; लेकिन निकल गया, क्योंकि दिल भरा हुआ है। ऐसा दुखी है हृदय हमारा। नारे लगाते हैं—'पूंजीपतियों का कौन दलाल—जयप्रकाश, जयप्रकाश', 'अमेरिका का कौन दलाल—जयप्रकाश, जयप्रकाश।' किस दुनिया में ये रहते हैं, पता नहीं। *(क्रमशः)* ❑

संपूर्ण क्रांति क्या, क्यों और कैसे?

जनता के द्वारा जनता का स्वराज आज की व्यवस्था, मूल्यों और संबंधों में आमूल परिवर्तन का आंदोलन

❑ सिद्धराज ढड्ढा

1. आजादी तो मिली, लेकिन...?

1947 में जब विदेशी शासन से मुक्ति मिली तब गांधीजी ने कहा था कि भारत को राजनैतिक आजादी तो मिल गयी, लेकिन ''शहरों और कस्बों से भिन्न उसके साथ लाख गांवों की दृष्टि से अभी सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना बाकी है।''

वास्तव में आम जनता के लिए केवल राजनैतिक स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं है, अगर उसकी सामाजिक और आर्थिक कठिनाइयां दूर न हों। पर आजादी के बाद वैसा वास्तविक स्वराज प्राप्त होना तो दूर रहा, जितनी-सी आजादी या नागरिक अधिकार लोगों को मिले थे वे भी पिछले वर्षों में धीरे-धीरे सीमित और संकुचित होते गये। जनतंत्र में जनता की शक्ति बढ़नी चाहिए थी, और जनता अपने पैरों पर खड़ी होनी चाहिए थी, उसके बजाय सरकार और नौकरशाही का जाल फैलता गया, जनता परावलम्बी बनती चली गयी, और आखिरकार हमें निरंकुश और लगभग तानाशाही शासन में से गुजरना पड़ा।

1977 में फिर स्वयं जनता के अभिक्रम से वह कालरात्रि समाप्त हुई, और तीस वर्ष बाद जनता को एक तरह से दुबारा राजनैतिक आजादी मिली, लेकिन बापू ने 1947 में जो कहा था कि सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी प्राप्त होना बाकी है, वही 1977 के लिए भी लागू था। अनुभव से यह स्पष्ट भी हो गया है।

बार-बार ऐसा क्यों होता है? इस पर हमें गहराई से सोचना चाहिए। बात यह है कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि परिवर्तन स्वयं जनता के अपने अभिक्रम और प्रयत्न पर ही निर्भर करता है, राजसत्ता अगर अनुकूल हो तो उसे मददभर कर सकती है। पर जो शासन चलाते हैं उनका रुख तो हमेशा राजसत्ता को ही उत्तरोत्तर मजबूत करने का रहता है, क्योंकि, चाहे ईमानदारी से सही चाहे सत्ता के मोह के कारण, उनकी यह मान्यता रहती है कि समाज की समस्याएं सरकार ही हल कर सकती है। सत्ताधारी कभी जनता के अभिक्रम या उसकी शक्ति को बढ़ाने की चिन्ता नहीं करते, उसके बढ़ने का स्वागत भी नहीं करते। अतः सरकार से या राजनैतिक नेताओं से इस मामले में कोई आशा रखना व्यर्थ है।

जन-जागृति और जन-संगठन से ही जनता की समस्याओं का हल हो सकता है। सरकार सहायक मात्र हो सकती है। जनशक्ति के अभाव में जनता की समस्याएं तो हल हो ही नहीं पाती हैं, बल्कि अवसरवादी तत्त्व राजनीति में तथा समाज-जीवन के अन्य सब क्षेत्रों में हावी हो जाते हैं। वोट प्राप्त करने के लिए गरीब और मूक जनता के हितों की दुहाई सभी राजनैतिक लोग देते हैं, पर जागृत जनमत के अभाव में वे सदा जनता के हितों की उपेक्षा करते हैं। आजादी के कारण प्राप्त अवसरों की वे अपनी स्वार्थ-सिद्धि का साधन बना लेते हैं। यह कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी कि एक तरह से ये लोग जनता के साथ विश्वासघात करते हैं, क्योंकि वे दुहाई तो हमेशा जनता के हित की देते हैं; लेकिन काम करते हैं उसके विपरीत। बुद्धिजीवी और निहित स्वार्थ वाले भी उनकी हां में हां मिलाते रहते हैं। इस प्रकार आजादी केवल ऊपर के चंद लोगों की आजादी रह जाती है।

2. सम्पूर्ण क्रांति क्या और क्यों?

इसीलिए गांधीजी ने कहा था कि केवल राजनैतिक आजादी काफी नहीं है, जनता को पूर्ण स्वराज चाहिए। 'पूर्ण स्वराज' के उस अधूरे काम को पूरा करने के लिए ही जयप्रकाशजी ने 'संपूर्ण क्रांति' का आह्वान किया है। संपूर्ण क्रांति का मतलब है 'सामाजिक, नैतिक और आर्थिक' सभी क्षेत्रों में तथा जीवन के हर पहलू में क्रांति, ताकि जनता सचमुच स्वराज का उपभोग कर सके। ऐसी संपूर्ण क्रांति स्वयं जनता ही कर सकती है और उसे ही वह करना है।

दो-दो बार के अनुभव से हमने देख लिया है कि यह काम शासन या कानून के जरिये नहीं हो सकता। शासन और कानून मददगार हो सकते हैं, उनको वैसा होना भी चाहिए, पर असली क्रांति स्वयं जनता ही कर सकती है। जागृत लोकशक्ति ही संपूर्ण क्रांति या पूर्ण स्वराज को ला सकती है।

इसलिए पहला काम लोकशक्ति को जागृत करने के लिए व्यापक 'लोक-शिक्षण' करने का है। लोक-शिक्षण के बाद लोक-संगठन। लोक-संगठन से ही वास्तविक लोकशक्ति प्रकट हो सकेगी।

हमारा तीसरा काम यथासंभव लोकशक्ति के जरिये जनता के जीवन को ऊंचा उठाने का, गरीबी, बेकारी आदि समस्याओं को हल करने का तथा रचना, निर्माण और विकास के वे सारे काम करने का होगा, जिनके जरिये जनता सचमुच में स्वराज का उपभोग कर सके।

हमारे काम का चौथा पहलू यह होगा कि पूर्ण स्वराज की ओर बढ़ रही जनता की इस यात्रा के मार्ग में जो रुकवटें आती हों, उनके साथ संघर्ष करना और उन्हें दूर करना। ये रुकावटें केवल बाहर से ही नहीं, स्वयं जनता की अपनी रूढ़िगत मान्यताओं, गलत परम्पराओं और स्वार्थ के कारण भी आती हैं। जात-पाँत, ऊंच-नीच, छुआछूत, व्यसन की गुलामी, ताकतवर द्वारा निर्बलों का शोषण—ये बातें समाज में हर स्तर पर चलती रहती हैं। मानव स्वभाव ही ऐसा है कि कम या ज्यादा, ये बातें बराबर होती रहती हैं। इन सब प्रकार के अन्यायों और शोषण के खिलाफ सतत संघर्ष के लिए जनता को जागृत और तैयार रखना क्रांतिकारी का मुख्य काम होगा।

3. चतुर्विध कार्यक्रम

इस प्रकार संपूर्ण क्रांति के लिए 1. शिक्षणात्मक, 2. संगठनात्मक, 3. रचनात्मक और 4. संघर्षात्मक—इस प्रकार चतुर्विध कार्यक्रम हाथ में लेना होगा। सरकार भी इन कामों में सहयोग करे। न करे तो जनमत का दबाव उस पर पड़ना चाहिए। कार्यक्रम की कुछ तफसील इस प्रकार है :

1. प्रचारात्मक या शिक्षणात्मक : संपूर्ण क्रांति का प्रचार तथा शिक्षण। जन-जागरण के कार्यक्रम, जैसे—सभा, सम्मेलन, प्रदर्शन, गोष्ठियां आदि।

2. संगठनात्मक : जनता जागृत हो जाय इतना काफी नहीं है, उसे संगठित भी करना होगा। नीचे ठेठ गांवों से लेकर ऊपर तक जन-संगठन की इकाइयां खड़ी करनी चाहिए। जयप्रकाशजी ने इसके लिए लोक समितियों के गठन का कार्यक्रम दिया है।

3. संघर्षात्मक : हर प्रकार के अन्याय के खिलाफ संघर्ष। सरकार, बाजार, नौकरशाही या किसी के भी द्वारा होने वाले अन्याय, शोषण और असामाजिक व्यवहार का प्रतिकार, सत्याग्रह आदि।

4. रचनात्मक : शांतिमय आंदोलन में संघर्ष के साथ-साथ नयी व्यवस्था और नयी जीवन-पद्धति का निर्माण आवश्यक है। शांतिमय संघर्ष में यह आवश्यक भी है और संभव भी। हम चाहते हैं कि अधिक-से-अधिक जनता अपनी मुक्ति के इस संघर्ष में शामिल हो, तो जिसके पास आज खाने को रोटी नहीं है उसे रोटी मिले, ऐसी व्यवस्था साथ-साथ नहीं हुई तो वह लड़ाई कैसे लड़ सकेगी? अतः संघर्ष में जनता की हिस्सेदारी और उसका मनोबल कायम रखने के लिए लड़ाई के साथ-साथ नयी न्यायपूर्ण व्यवस्था के द्वारा जनता का शोषण रोकना और उसे राहत पहुंचाना भी आवश्यक है। उदाहरण के लिए, लोक समितियों को जन-जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि और नयायपूर्ण वितरण का तथा नयी पीढ़ी के लिए नयी शिक्षण-व्यवस्था करने का काम हाथ में लेना चाहिए।

4. परिस्थिति के तात्कालिक कारण और उपाय

जनता की परेशानी के तात्कालिक कारण नीचे लिखे अनुसार हैं :—

1. महंगाई : जो दिनोंदिन उग्ररूप धारण करती जा रही है।

2. व्यापक बेकारी : यह भी उत्तरोत्तर बढ़ रही है। काम करना चाहने वालों और कर सकने वालों को भी, काम नहीं मिल रहा है। लाखों लोग भुखमरी की स्थिति में जी रहे हैं।

3. भ्रष्टाचार : इतना व्यापक हो गया है कि उसके कारण सारे समाज की जड़ें खोखली हो गयी हैं और विकास का मार्ग अवरुद्ध हो गया है।

4. राजनैतिक और आर्थिक दोनों प्रकार का अत्यधिक केन्द्रीकरण हुआ है और हो रहा है। सामान्य नागरिक के अभिक्रम के लिए कोई गुंजाइश नहीं रही है। नागरिक और उसका जीवन चारों तरफ से जकड़ा जा रहा है। इस केन्द्रीकरण के कारण जनता पहले से ज्यादा गुलाम और असहाय हो गयी है।

इस प्रकार 1. महंगाई, 2. बेकारी, 3. भ्रष्टाचार और 4. केन्द्रीकरण से उत्पन्न गुलामी—ये आज की मुख्य समस्याएं हैं। इनके निराकरण का मार्ग नहीं निकाला गया तो देश में विस्फोट अवश्यम्भावी है। इसमें से व्यापक हिंसा और अराजकता प्रकट होगी, और फिर इनका बहाना बनाकर आयेगी तानाशाही—चाहे उसका रंग-रूप कुछ भी हो।

अतः तात्कालिक दृष्टि से संपूर्ण क्रांति का उद्देश्य जनता को महंगाई, बेकारी, भ्रष्टाचार और परावलम्बन के 'चतुर्विध ताप' से मुक्त करने का है। अन्ततोगत्वा जनता स्वयं सब प्रकार के शोषण और विषमता को जन्म देने वाली आज की व्यवस्था को तोड़कर उसकी जगह एक नये समाज की रचना कर सकें, यह उसका आगे का लक्ष्य है। दूसरे शब्दों में, **यह जनता के द्वारा जनता की मुक्ति का और नये समाज के निर्माण का आंदोलन है।** गांधीजी ने इसी को पूर्ण-स्वराज्य कहा था। उस अधूरे सपने को, युग-युगान्तर से चली आ रही जनता की आकांक्षा को, पूरा करने का आंदोलन है।

यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि महंगाई, भ्रष्टाचार आदि समस्याओं के जो कारण हैं वे केवल ऊपरी या बाहरी नहीं हैं, इनकी जड़ें आज की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक व्यवस्था में तथा हमारी गलत धारणाओं और मूल्यों में गहरी गयी हुई हैं। इसलिए यह सामान्य लड़ाई नहीं है, छोटी-मोटी मांगों की पूर्ति का आंदोलन नहीं है, बल्कि आज की संपूर्ण व्यवस्था तथा उसे टिकाये रखने वाले निहित स्वार्थ व मूल्यों के खिलाफ यह संघर्ष है। संपूर्ण क्रांति है!

5. आंदोलन की बुनियाद और लक्ष्य

हमारे आंदोलन की बुनियाद आध्यात्मिक है, केवल भौतिक नहीं, यह भी समझ लेना चाहिए। अध्यात्म से मतलब ब्रह्मज्ञान से या पंथ-सम्प्रदाय जैसी किसी चीज

से नहीं है। **अध्यात्म का मतलब है–समूची सृष्टि की एकता में विश्वास। इस एकता की अनुभूति ही अध्यात्म है।** यह अनुभूति पक्की हो गयी तो उसके फलस्वरूप :—

(क) 'सबके हित में मेरा हित है—इस तथ्य की आंतरिक और स्वेच्छा से स्वीकृति हो सकेगी, बाहरी दबाव की आवश्यकता नहीं रहेगी।

(ख) समूह-जीवन और परस्परावल्मबन में आस्था तथा परस्पर सुख-दुःख में हिस्सेदारी की भावना भी सहज हो सकेगी।

(ग) अन्त्योदय की दृष्टि प्रधान रहेगी। सबसे पहले कमजोर की चिन्ता करना, उसके 'उदय' को प्राथमिकता देना, कर्तव्य मालूम होगा।

इस बुनियाद पर संपूर्ण क्रांति—अर्थात, अन्त्योदय की भावना और उद्देश्य से वैचारिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि जीवन के सभी क्षेत्रों में आमूल परिवर्तन—हमारा लक्ष्य है।

6. संपूर्ण क्रांति के दो बुनियादी तत्त्व

क्रांति के बारे में दो बातें स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए :—

1. कोई व्यक्ति या बाहरी संगठन, जनता की समस्याओं का हल कर देगा, ऐसा मानना भ्रम और वंचना है। इसी भ्रम के कारण जनता अभी तक बार-बार ठगी गयी है। यह सही है कि स्वयं जनता का मानस इस बात के अनुकूल रहता है कि उसका कष्ट कोई दूसरा दूर कर दे। जनता असंगठित है इसलिए भी उसके द्वारा कोई असरकारक काम होना कठिन हो जाता है। दूसरी ओर, क्रांतिकारी भी अपने दिल की वेदना और तड़प के कारण इसी दिशा में सोचता है कि वह स्वयं, या कोई संगठन बनाकर, जल्दी-से-जल्दी जनता की समस्याओं का हल कर दे। लेकिन सच्ची भावना से क्रांति का काम शुरू करने पर भी परिस्थिति अंत तक क्रांतिकारी के अपने हाथ में नहीं रहती, यह अब तक का अनुभव है। क्रांति में जनता के 'इन्वाल्व' न होने, और उसमें केवल थोड़े से लोगों के सक्रिय रहने के कारण प्रतिक्रांति के तत्त्व किसी न किसी रूप में परिस्थिति पर हावी हो जाते हैं।

2. क्रांति के लिए हिंसक उपायों के अवलम्बन के कारण यह और भी आसान हो जाता है, क्योंकि एक तो हिंसक आंदोलन में गुप्तता रखनी पड़ती है और दूसरे, ऐसे शस्त्रों का उपयोग करना पड़ता है, जो सबको उपलब्ध हो ही नहीं सकते, इसलिए क्रांति जनता के हाथ में नहीं रहती।

इसीलिए लोकनायक जयप्रकाश इस बात पर जोर देते हैं कि 1. जनता को अपनी लड़ाई स्वयं लड़नी है और 2. उसके तरीके शांतिमय और शुद्ध होने चाहिए। गांधी और विनोबा भी यही कहते रहे हैं। ये दोनों बातें हम अच्छी तरह समझ लें और जनता को भी बार-बार समझायें, ताकि हम भी एक बार फिर जनता के ठगे जाने के निमित्त न बनें। हम पहल करें, जनता को जागृत और संगठित करने के लिए आगे आयें, लेकिन हमारे सामने अपनी भूमिका स्पष्ट रहे—हम केवल जनता के सेवक और प्रहरी हैं, उसके उद्धारक नहीं। हम ईश्वर के हाथ के औजार मात्र हैं।

7. क्रांति के वाहक

इस लड़ाई की अगुआई छात्रों और युवकों को करनी है। क्रांति का नेतृत्व नौजवान करें यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि भविष्य उनका है। शारीरिक और मानसिक शक्ति तथा उत्साह भी उनमें अधिक होता है। उनका चरित्र अपेक्षाकृत शुद्ध होता है। अधिक उम्र वालों में से जिनमें क्रांति की तड़प है और जिन्हें अनुभव है उनका समर्थन, सहयोग और मार्गदर्शन अवश्य लिया जाय, लेकिन अगुआई नौजवान करें, यही अच्छा होगा।

नौजवानों में भी छात्रों की जिम्मेदारी पहली है, क्योंकि एक तो वे बौद्धिक दृष्टि से ज्यादा उपयोगी हो सकते हैं और दूसरे, एक ही जगह बड़े समूह में इकट्ठे रहने के कारण वे असरकारक भी जल्दी हो सकते हैं। लेकिन छात्रों को हमेशा अपने हमउम्र, गैर-छात्र साथियों को साथ में लेने का ध्यान और इच्छा रखनी चाहिए।

8. मर्यादाएं और पथ्य

इस आंदोलन की कुछ मर्यादाएं और पथ्य भी हमें ध्यान में रखने हैं।

जनता का हथियार शांतिमय ही हो सकता है यह हम ऊपर देख चुके हैं, और उसका कवच सचाई है। इसी को दूसरे शब्दों में कहें तो अहिंसा और सत्य जनता की लड़ाई के हथियार और ढाल हैं। निर्भयता उसकी प्राणवायु है।

निर्दलीय भावना इस आंदोलन का पथ्य है। जनता का अधिकांश भाग निर्दलीय ही होता है। दलों में थोड़े ही लोग होते हैं। दलों का हमें विरोध नहीं है, हम उनका सहयोग चाहते हैं, पर दल वालों को, और अन्य सबको भी, यह समझना चाहिए कि दल अन्ततोगत्वा जनता को बांटने का काम करते हैं। और जनता की ताकत तो उसकी एकता में निहित है। एकता से ही जनशक्ति का निर्माण संभव है। इसलिए कम-से-कम इस आंदोलन में दल वालों को भी निर्दलीय भावना से काम करना है। जनता का हित सबके लिए सर्वोपरि होना चाहिए, चाहे वे पार्टियों के लोग हों या अन्य, क्योंकि यह सारी जनता की मुक्ति का आंदोलन है।

संपूर्ण क्रांति के आंदोलन में काम करने वाले कार्यकर्ता को सिवा आंदोलन की सफलता के और और कामना नहीं रखनी चाहिए। वह सत्ता-प्राप्ति के लिए काम नहीं कर रहा है यह स्पष्ट होना चाहिए। ऐसी निष्कामवृत्ति

की स्थूल कसौटी के तौर पर इस आंदोलन में अगुआई करने वाले लोग यह घोषणा करें कि कम-से-कम 5 वर्ष तक वे सत्ता के किसी पद पर नहीं जायेंगे, न चुनाव लड़ेंगे, तो अच्छा होगा।

इस प्रकार शांति और सचाई ये इस आंदोलन की मर्यादाएं हैं, निर्दलीय भावना और निष्कामवृत्ति इसके पथ्य हैं, और निर्भयता इस आंदोलन की प्राणवायु! अर्थात् आंदोलन में हमारे उपाय शांतिमय और शुद्ध होंगे, हमारी भावना निर्दलीय और निष्काम होगी, और निर्भयता हमारी शक्ति का असली स्रोत होगी।

9. रणनीति–स्ट्रेटेजी

शांतिमय आंदोलन का अपना स्वधर्म होता है, उसकी अपनी विशेषता होती है। शांतिमय आंदोलन में सबके सहयोग की आकांक्षा निहित है। वह उसका स्वधर्म ही है। इसलिए हमारी वृत्ति, इच्छा और कोशिश सबका सहयोग लेने की होगी—राजनैतिक, आर्थिक सत्ताधीशों का तथा विरोधी पक्षों का भी—बशर्ते कि वे अपने कामों और नीतियों से संपूर्ण क्रांति के सिद्धांतों और उद्देश्यों से सहमत होने और क्रांति के सहयोगी होने का प्रमाण देते रहें। कोई भी व्यक्ति, दल या संगठन हमारे लिए अछूत नहीं होगा। सबके—दुष्ट-से-दुष्ट और कठोर-से-कठोर प्रतीत होने वाले व्यक्ति के भी—परिवर्तन में हमारा विश्वास है, लेकिन मनुष्य की कमजोरियां क्रांति को अवरुद्ध कर सकती हैं, यह भान भी हमें रहना चाहिए। अतः उनके प्रति हम गाफिल नहीं रहेंगे।

सबके सहयोग, सबके अविरोध का मतलब यह नहीं होगा कि किसी व्यक्ति, दल या संगठन के विरोध के डर से हम अन्याय को सहन करते रहें और उसका प्रतिकार न करें। **अन्याय के खिलाफ निरंतर संघर्ष आंदोलन का मुख्य तत्त्व है। अन्याय का प्रतिकार हमारा मंत्र है। अन्याय करेंगे नहीं, सिर्फ इतना काफी नहीं है, हम अन्याय सहेंगे भी कदापि नहीं!**

इस प्रकार इस आंदोलन की रणनीति के दो पहलू होंगे—संघर्ष और सहयोग! सहयोग और संघर्ष!

10. संपूर्ण क्रांति!

इस प्रकार जनता की मुक्ति का यह आंदोलन संपूर्ण क्रांति का आंदोलन है। **संपूर्ण क्रांति अर्थात् वैचारिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक सब प्रकार की क्रांति। इसके अलावा, क्रांति की कल्पना में, क्रांति के साधनों में और क्रांति की प्रक्रिया में भी क्रांति!**

ऐसे उदात्त लक्ष्य के लिए समर्पित होकर काम करने वाला कौन धन्य नहीं होगा? उन लोगों का, जिनका हृदय जनता की दुर्दशा के कारण पीड़ा से भरा हुआ है, क्या वे उसके मूक दर्शक बने रहेंगे, या ईश्वर ने (या प्रकृति ने कहिये) उन्हें जो बुद्धि, विवेक और कर्तृत्व-शक्ति दी है, उन शक्तियों का पूरा उपयोग, निष्काम भाव से और नम्रतापूर्वक, आज की परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए करेंगे? जनता की मुक्ति के इस अभियान में जुट जाने से बढ़कर और कौन-सा ध्येय जीवन का हो सकता है? जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि और क्या होगी? अतः संपूर्ण क्रांति के लिए सबसे पहली आवश्यकता है इस ध्येय से प्रेरित होकर काम करने वाला निष्काम और समर्पित कार्यकर्ता! एक बार एक समर्पित कार्यकर्ता की 'इकाई' खड़ी हो जाय तो फिर अनेक 'शून्य' उसके आगे लग सकते हैं। अतः सफलता, असफता की चिन्ता न करके, हमारा कर्तव्य है कि अपने अन्तर के प्रकाश के अनुसार परिस्थिति का मुकाबला करें। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते!' ❑

बस्सी (राजस्थान), 4 फरवरी, 1978

* *वरिष्ठ सर्वोदय नेता एवं सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष रहे हैं।*

संपूर्ण क्रांति राष्ट्रीय मंच की बैठक स्थगित

बिहार एवं अन्य प्रदेशों में भीषण गर्मी होने के कारण व्यवस्था में हो रही कठिनाइयों के मद्देनजर वरियारपुर, मुंगेर में 4-5 जून, 2015 को होने वाला संपूर्ण क्रांति सम्मेलन को सबके हित में स्थगित कर दिया गया है। यह सूचना मंच के संयोजक भाई भवानीशंकर कुसुम ने दी है। **–स.ज. प्रतिनिधि**

अविनाश भाई नहीं रहे

सर्व सेवा संघ के भूतपूर्व महामंत्री एवं प्रकाशन समिति के भूतपूर्व संयोजक अविनाश भाई का 14 मई, 2015 को शाहजहांपुर (उत्तर प्रदेश) में निधन हो गया।

सर्व सेवा संघ ने उनके देहावसान पर गहरी संवेदना व्यक्त की। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही, महामंत्री शेख हुसेन, प्रबंधक ट्रस्टी टीआरएन प्रभु, ट्रस्टी डॉ. रामजी सिंह, प्रवक्ता भवानी कुसुम, सर्वोदय समाज के संयोजक आदित्य पटनायक, सर्वोदय जगत के संपादक बिमल कुमार, कार्यकारी संपादक अशोक मोती तथा प्रकाशन एवं परिसर के संयोजक शिवविजय भाई ने अविनाश भाई के निधन पर संवेदना व्यक्त करते हुए कहा कि यह सर्वोदय जगत की एक अपूरणीय क्षति है। अविनाश भाई तो सर्वोदय परिवार के यायावर थे। उनकी अंतिम इच्छा ग्रामस्वराज्य का काम करते हुए कार्यक्षेत्र में मृत्यु की थी।

15 मई, 2015 को सर्व सेवा संघ, वाराणसी परिसर में एक श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया और विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। सभा में शिवविजय सिंह, जागृति राही, संजय सिंह, अखिलेश मिश्रा, सुरेन्द्र नारायण सिंह, तारकेश्वर सिंह, अनूप नारायण, उमेश कुमार, अजय मिश्रा, सुशील कुमार, अतुल, महेन्द्र कुमार, नन्दकिशोर, रामू व श्यामू यादव सहित परिसर निवासी व शहर के गणमान्य साथी उपस्थित रहे। **- स.ज. प्रतिनिधि**

सर्वोदय एवं संपूर्ण क्रांति

❑ ठाकुरदास बंग

''सर्वोदय'' शब्द हमें गांधीजी की आधुनिक देन है। वैसे देखा जाय तो जैन मुनि समन्तभद्र ने इस शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम सैकड़ों वर्षों पूर्व किया है। रस्किन की पुस्तक ''अन्टु दिस लास्ट'' का गुजराती में अनुवाद करते समय गांधीजी ने बिलकुल अंतिम स्तर के आदमी का उदय, ऐसा न कहते हुए सर्वोदय ऐसा कहा है। क्योंकि यदि आखरी आदमी का उदय हुआ तो बचे हुए बाकी सब लोगों का उदय हो ही जायेगा। सब लोगों का उदय, सभी का हित यानि सर्वोदय। योरप अमरिका के लोकतंत्रवादी राष्ट्रों की अत्याधुनिक धारणा, ज्यादा से ज्यादा लोगों का अत्याधुनिक हित इस सीमा तक पहुंची है। किन्तु सर्वोदय उसके आगे एक कदम जाकर सभी के हितों का लक्ष्य दुनिया के सामने रखता है।

किन्तु सभी का हित किस प्रकार साध्य किया सकता है? सभी के हितों की कल्पना मात्र कवि कल्पना ही नहीं क्या? यह केवल स्वप्न रंजन ही नहीं क्या? आज दुनिया में स्वार्थों की टक्कर ही दीखनी है। मालिक विरुद्ध मजदूर, डॉक्टर विरुद्ध मरीज, उतपादक विरुद्ध उपभोक्ता ऐसा हित विरोध आज समाज में नजर आता है। किन्तु यह वास्तव में हित-विरोध नहीं है अपितु ऊपरी स्वार्थ विरोध है। मानव-मानव में दरअसल हित-विरोध हो ही नहीं सकता। एक डॉक्टर का किस्सा यहां याद आता है। अत्यधिक मिहनतकश और अधपेट जीविकार्जन करने वाला एक मजदूर जो, तपेदिक का मरीज था, एक डॉक्टर के पास पहुंचा। डॉक्टर ने उसे पौष्टिक आहार तथा विश्राम का उपचार सुझाया। दूसरा एक मोटा ताजा सेठ मंदाग्नि का मरीज उसी डॉक्टर के पास गया। डॉक्टर ने उसे नियमित शरीर-श्रम तथा बीच-बीच में उपवास से उपचार बताया। इस प्रकार दोनों मरीजों को परस्पर विरोधी किन्तु उनके हित का उपचार बताया गया। इनमें हित का विरोध कहां है? हितविरोध की कल्पना सर्वोदय मानता नहीं। धनवानों की रईसी यह जिस प्रकार बीमारी है उसी प्रकार गरीबों की गरीबी यह भी एक बीमारी ही है। सर्वोदय निरोगी स्वस्थ समाज की कल्पना करता है। उसमें हितविरोध हो ही नहीं सकता। सब लोगों के हित में व्यक्ति का हित निहित है तथा व्यक्ति-व्यक्ति के हित में कोई विरोध नहीं, यह रस्किन की प्राथमिक सिखावन है।

सर्वोदय का लक्ष्य है शोषणमुक्त शासन निरपेक्ष समाज। इस प्रकार का समाज आज दुनिया में कहीं भी अस्तित्व में नहीं है। मानव जाति को उस ओर अग्रसर होना है। मार्क्स तथा गांधी दोनों को यह लक्ष्य स्वीकार है। सर्वोदय शुद्ध साधन को ही मानता है। सर्वोदय का यह प्राथमिक सिद्धांत है क्योंकि साधन की ही परिणति साध्य में होती है। जैसा बीज वैसा फल। इसलिए सत्य, अहिंसा का मार्ग गांधीजी ने अपनाया। सत्याग्रह का मार्ग उन्होंने दुनिया को दिखाया। सादगी का रहन-सहन तथा उच्च विचार की भूमिका सर्वोदय को अभिप्रेत है। वकील का काम तथा नाई का नाम, दोनों का समाजोपयोगी मूल्य समान है। इसलिए दोनों की आमदनी समान ही होनी चाहिए। यह रस्किन का दूसरा मशहूर सिद्धांत है। उसी प्रकार शरीर श्रमाधिष्ठित जीवन ही जीने योग्य जीवन है, यह रस्किन का तीसरा सिद्धांत है। इसका मतलब, हरेक का उदर निर्वाह के लिए कुछ तो उत्पादक श्रम करना चाहिए।

सर्वोदय का प्रारंभ स्वयं से होता है। गांधीजी ने कहा था कि कुछ थोड़े लोगों के हाथ में सत्ता आने से सच्चा स्वराज्य निर्माण नहीं होगा। तो सत्ता के दुरुपयोग के विरोध में संघर्ष करने की शक्ति सब लोगों में निर्माण होगी तब ही सच्चा स्वराज्य प्राप्त हुआ—ऐसा मैं मानूंगा। मतलब यह है कि सर्वोदय सत्ता का विकेन्द्रीकरण और सत्याग्रह का केन्द्रीकरण देता है। सत्याग्रह में बहिष्कार, हड़ताल, असहयोग, सविनय कानून भंग आदि का अंतर्भाव होता है। गांधीजी की मृत्यु के पश्चात् उनके शिष्य विनोबाजी ने भूदान ग्रामदान, ग्राम स्वराज्य सह सर्वोदय के कार्यक्रम देश के सामने रखे। इस माध्यम द्वारा लाखों एकड़ भूमि भूमिहीनों को भूमिधारकों ने बांटी और ग्राम स्वराज्य की नींव डाली गयी। इस नई विचारधारा से राज्य शासनों को जमीन की अधिकतम धारणा एवं काश्तकारी कानून की निर्मिति आसान हुई। आपसी झगड़े दंगों के जरिये नहीं, शांति सेना के माध्यम से सुलझाये जाये—यह योजना विनोबाजी ने रखी। इस कार्यक्रम द्वारा रचनात्मक क्रांति का मार्ग देश में प्रशस्त हुआ। इसके लिए उन्होंने 14 वर्ष तक भारत में पदयात्रा की।

इसके बावजूद भी भारत में महंगाई, बेकारी, विषमता, भ्रष्टाचार का प्रमाण बढ़ता हुआ नजर आता है। शिक्षा में मूलगामी परिवर्तन हुआ नहीं है। इसलिए जयप्रकाशजी ने 5 जून, 1974 को पटना की विशाल सभा में 'संपूर्ण क्रांति' की घोषणा की।

संपूर्ण क्रांति का अर्थ?

सामान्य तौर पर लोग क्रांति का अर्थ हिंसा, मारपीट आदि से जोड़ते हैं, क्योंकि उनके सामने अन्य देशों में हुई हिंसक क्रांतियां रहती हैं। किन्तु गांधीजी ने भारत में अहिंसक स्वतंत्रता संग्राम छेड़कर राजकीय क्रांति का प्रथम चरण पूरा किया, इस बात को लोग भूलते हैं। लोगों के विचार-आचार में परिवर्तन लाना, व्यक्ति-व्यक्ति के संबंध तथा संस्थाओं

में स्वस्थ परिवर्तन लाना—इसका अर्थ है संपूर्ण क्रांति। इन्द्रधनुष के सात रंगों के माफिक संपूर्ण क्रांति के सात पहलू होते हैं।

राजकीय क्रांति यह संपूर्ण क्रांति का पहला पहलू है। मतपेटी द्वारा जनता ने 1977 में देश से हुकूमशाही को हटाया—यह हुआ राजकीय क्रांति का एक हिस्सा। किन्तु अब भी शासकीय सत्ता दिल्ली में केन्द्रित है। उस केन्द्रित शासन को गांव में ग्रामसभा तक तथा शहर में नगर परिषद तक पहुंचना होगा। जिस काम को गांव में किया जा सकता है उसे निपटाने की सत्ता ग्रामसभा को मिलनी चाहिए। ऐसे काम को करने की सत्ता तथा अधिकार केन्द्र अथवा राज्य शासन को देने से क्या लाभ? उसी प्रकार जन प्रतिनिधियों पर मतदाताओं का अंकुश रखने का काम मतदाता परिषदों के माध्यम से किया जाये। उन्हें लोक प्रतिनिधि लोगों को खड़ा करना होगा।

आर्थिक क्रांति—यह युग की मांग है। केवल माताधिकार प्राप्त होने से पेट की ज्वाला किस प्रकार शमन की जा सकती है? इसलिए ग्रामों में कृषि तथा विकेन्द्रित उद्योग विकसित करने होंगे ताकि हरेक को सम्मानजनक काम मिल सकें। इन उद्योगों में निर्मित हुए उत्पादित माल का मूल्य उत्पादन व्यय पर आधारित करने होंगे ताकि कृषक का शोषण न हो। उसी प्रकार जो उद्योग देहातों में नहीं चल सकते हैं उन्हें शहरों में चलाना होगा। शेष उद्योग देहातों में खड़े करने होंगे। शहर में निर्मित वस्तु तथा सेवाओं के मूल्य इस प्रकार तय करने होंगे कि वे ग्रामों का शोषण न कर सके। रचना इस प्रकार की करनी होगी कि शहर ग्रामों के शोषक न बन कर देहातों के सहायक बनें। उत्पादनों के साधन उत्पादकों को दिये जाने चाहिए। कृषि का पुनर्वितरण करना होगा। उद्योगों में हिस्सेदारी लानी होगी और विश्वस्तता का विकास करना होगा। इससे आर्थिक विषमता घटेगी। अपने ग्राम में अथवा उसके इर्द-गिर्द बने हुए वस्तुओं का हम उपयोग करेंगे, उन्हें ही खरीद करेंगे, उन्हें ही खरीदेंगे, इसलिए ग्राम आंदोलन चलाना होगा। उसी प्रकार संकल्प कर शहर में उत्पादित वस्तुओं पर बहिष्कार का आंदोलन चलाना होगा। विकास की वस्तुओं के उत्पादन पर अंकुश लाना होगा। समूचे देश में ऐसा श्रमनिष्ठा का वातावरण निर्माण करना होगा। आर्थिक क्रांति संपूर्ण क्रांति का दूसरा पहलू है।

सामाजिक क्रांति से सभी की प्रतिष्ठा समान होगी। इस प्रकार के संकेत निर्माण करने होंगे कि हरिजन पिछड़ी हुई जातियां, आदिवासी, बहनें आदि दिन-प्रति-दिन के व्यवहार में समानता का अनुभव कर सकें। दहेज, विवाह में चमक-दमक समाप्त करनी होगी। अंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहित कर जाति निर्मूलन करना होगा। यह होगी सामाजिक क्रांति जो संपूर्ण क्रांति का तीसरा पहलू हो।

शिक्षा में मौलिक परिवर्तन लाना होगा। आज की शिक्षा पद्धति स्वावर्थ की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती है। उससे शोषण तथा संघर्ष निर्माण होता है। आज शिक्षा का संबंध उद्योग से, निसर्ग से अथवा सामाजिक परिस्थिति से जुड़ा हुआ नहीं होता। उससे शिक्षा केवल किताबी रह जाती है और शिक्षित द्वार-द्वार नौकरी के लिए भटकते हैं। इसलिए शिक्षा का संबंध उद्योग सामाजिक स्थिति, प्रकृति व नैतिकता से संबद्ध करना होगा। शिक्षा में क्रांति यह संपूर्ण क्रांति का चौथा महत्त्वपूर्ण पहलू होगा।

संपूर्ण क्रांति के **नैतिक, सांस्कृति** और **आध्यात्मिक**—ये अन्य तीन महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। वर्तमान में असत्य, हिंसा, व्यभिचार आदि को अनैतिक माना जाता है। इनके साथ शोषण को भी जोड़ा जाना चाहिए। शराब जैसे व्यसन से समाज को मुक्त करना होगा। आवश्यक हुआ तो इसके लिए गांधीजी के अपनाये हुए पिकेटिंग आदि कार्यक्रमों को चलाना होगा। मानव-मानव के आपसी संबंध किस प्रकार सुधरेंगे, वे एक-दूसरे के सन्मुख किस प्रकार आवेंगे और एक दूसरे के सुख-दुःख में किस प्रकार सहभागी होंगे—इन बातों का सांस्कृतिक क्रांति में विचार करना होगा। एक और टूटीफूटी कुटियां और दूसरी ओर अट्टालिकाओं की निर्मिति असांस्कृतिक कृत्य माना जाय। अध्यात्मिक क्रांति के संदर्भ में प्रचलित जीवन-मूल्यों की जांच-पड़ताल करनी होगी। कालबाह्य अथवा गलत मूल्यों को त्यागना होगा, अंधविश्वास को मिटाना होगा। दास्य भक्ति के स्थान पर सख्य भक्ति का उदय होगा। दैनंदिन जीवन में धर्म समभाव दीखना चाहिए। इस प्रकार संपूर्ण क्रांति रूपी इन्द्रधनुष के ये सात रंग हैं।

संपूर्ण क्रांति नित्य नूतन होगी। उसकी प्रक्रिया अविरत चालू रहेगी। उसमें व्यक्ति की स्थिति बदलती रहेगी, उसी प्रकार समाज भी बदलता रहेगा। उसका प्रारंभ होगा विचार-प्रचार से। उससे क्रांति के सैनिक बढ़ेंगे तथा वातावरण भी बदलेगा। **राजसत्ता के परिवर्तन से संपूर्ण क्रांति का कार्य समाप्त नहीं होगा। संपूर्ण क्रांति का लक्ष्य राजसत्ता के परिवर्तन से नहीं है, खुद का परिवर्तन, साथ-साथ समाज के परिवर्तन का है।** विधान सभा तथा लोकसभा में चुनकर गये हुए प्रतिनिधियों को इस काम में हाथ बटाना चाहिए। इसीलिए ग्रामों, शहरों, मुहल्लों में लोक समितियां संगठित कर जनमत संगठित करना होगा। लोक समितियों का प्रमुख कार्य होगा संगठित प्रयास के माध्यम से गांव की समस्या हल करना।

इस प्रकार संपूर्ण क्रांति भारत को मुक्ति की ओर ले जाने वाली प्रयास है। इस दृष्टि से आज भारत में अनुकूल वातावरण है क्योंकि अब कोई दूसरा चारा नहीं है। राजकीय पक्षों से अब जनता त्रस्त है। 1947 में स्वतंत्रता को प्राप्त कर, सब कुछ शासन के भरोसे छोड़कर हम निद्रित रहे। नतीजा जो रहा, हम जानते ही हैं। 35 वर्ष पश्चात् फिर से हम उसी गलती को दोहरये नहीं। इसलिए ही लोकनायक जयप्रकाशजी ने 'संपूर्ण क्रांति' का नारा लगाया और देश को जागृत किया। सर्वोदय तथा संपूर्ण क्रांति का लक्ष्य तथा साधन एक ही होने से संपूर्ण क्रांति का मतलब सर्वोदय है। अथवा संपूर्ण क्रांति होने से सर्वोदय सिद्ध होगा। दूसरे शब्दों में **संपूर्ण क्रांति साधन है, सर्वोदय साध्य। संपूर्ण क्रांति हुए बगैर सर्वोदय हो नहीं सकेगा।** ❑

* *वरिष्ठ सर्वोदय नेता एवं सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष रहे हैं।*

संपूर्ण क्रांति और लोकनायक

❑ न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर धर्माधिकारी

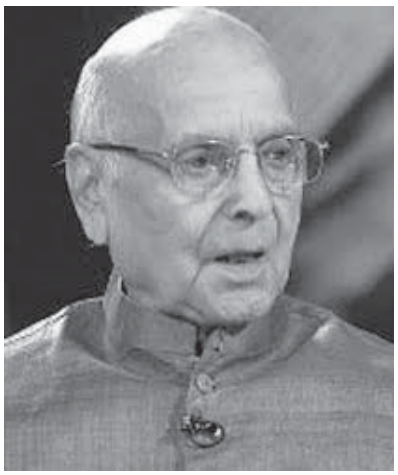

लोकनायक जयप्राकाशजी का व्यक्तित्व ही इतना महान था कि उसे समझना हमारे लिए आसान नहीं था। प्रसिद्ध दार्शनिक ईमरसन का एक वाक्य है, वे कहते हैं, "To be great is to be misunderstood" इसीलिए कुछ लोगों ने संपूर्ण क्रांति के आंदोलन को 'उधम' कहा, तो जयप्रकाशजी के विरोधियों ने उसे 'संपूर्ण भ्रांति' का आंदोलन कहा। लेकिन जयप्रकाशजी ने ही यह स्पष्ट रूप से कह दिया था कि ''आज तक कोई क्रांति ऐसी नहीं हुई है, जो किताब के मुताबिक हुई है। हर क्रांति अपनी किताब स्वयं लिखती है।'' क्रांति का अंकगणित नहीं होता, नुस्खे नहीं होते, क्रांति के प्रतीक होते हैं। जिनका मूल्य होता है, जिनकी सिर्फ कीमत नहीं होती। दुर्भाग्य से जिनके प्रस्थापित समाज रचना में हित संबंध सुरक्षित होते हैं, वह लोग परिवर्तन नहीं चाहते, क्योंकि परिवर्तित समाज में उनका क्या स्थान होगा, इसकी उन्हें शाश्वति या गारण्टी नहीं होती। और जो परिवर्तन चाहते हैं, वे भी उससे डरते हैं। परिणामस्वरूप जो परिवर्तन चाहते हैं वे भी क्रांति नहीं चाहते, सिर्फ सत्ता परिवर्तन या व्यक्ति परिवर्तन चाहते हैं। वे संपूर्ण क्रांति जो समग्र क्रांति का अभिन्न अंग है, उन्हें समझना भी नहीं चाहते। इसलिए हम जयप्रकाशजी के 'संपूर्ण क्रांति' के संकल्पना को ही ठीक से समझ नहीं सके, यही असली 'शोकान्तिका' है।

जयप्रकाशजी ने उनके जेल में लिखी डायरी में जो लिखा है, उससे यह स्पष्ट होता है कि उनकी 'संपूर्ण क्रांति' की संकल्पना 'समग्र क्रांति' की संकल्पना थी। जिसमें 1. सामाजिक क्रांति, 2. आर्थिक क्रांति—जिसमें औद्योगिक क्रांति, कृषि क्रांति तथा यांत्रिक क्रांति भी अभिप्रेत थी, 3. राजनीतिक क्रांति, 4. सांस्कृतिक क्रांति, 5. वैचारिक या बौद्धिक क्रांति, 6. शैक्षणिक क्रांति तथा 7. अध्यात्मिक क्रांति। यह क्रांति का समग्र दर्शन निहित था। सारांश में कहा जाय तो यह संपूर्ण क्रांति शांतिपूर्वक तो होगी ही, लेकिन वह समग्र क्रांति होने के कारण, उसमें प्रतिक्रांति को फिर अवसर नहीं होगा या उसकी संभावना ही नहीं रहेगी यह भावना थी। मतलब प्रचलित क्रांति की संकल्पना से संपूर्ण क्रांति की भावना संपूर्णतः भिन्न थी। इतना ही नहीं तो लोकतंत्र को मजबूत बनाना हो तो उसके पीछे लोकशक्ति और लोकसत्ता का आधार खड़ा करना चाहिए, यह जे. पी. की भूमिका थी। लेकिन वे स्वयं 'सत्ताकांक्षी' या 'सत्ताधारी' नहीं थे। दुर्भाग्य से उनके साथ जो सत्ताकांक्षी लोग जुड़े थे, वे संपूर्ण क्रांति नहीं चाहते थे। उनका नारा था, 'इन्दिरा हटाव और हमको बैठाव'। जिसके कारण संपूर्ण क्रांति की भूमिका ही प्रदूषित और कलुषित हो गयी और राजनीतिक सत्ता परिवर्तन के बाद स्वयं जयप्रकाशजी को ही कहना पड़ा कि, 'सापनाथ गये और नागनाथ आये'। सिर्फ व्यक्ति बदले, राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन नहीं हुआ। संपूर्ण क्रांति की बात तो अलग ही रह गयी। इतना ही नहीं तो संपूर्ण क्रांति की संकल्पना में जो राजनीति को पर्याय ढूंढने की बात थी, वह संकल्पना भी नहीं रही। और, जो राजनीतिक सत्ता से अलग थे, वे भी चुनावी उम्मीदवार बने, इतना ही नहीं तो 'स्वयंसेवी' और 'सर्वोदयी' संस्थाओं में भी 'चुनाव' होने लगे। सत्ताकांक्षा और पदाकांक्षा बढ़ी। और समन्वय, संवादित्व, सर्वानुमति और सर्वसम्मति के मार्ग समाप्त हो गये। सेवक भी संस्थानिक बने। और अदालत मुक्ति के बदले अदालतबाजी बढ़ी। यही सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। जयप्रकाशजी के संपूर्ण क्रांति के विचार उनके ही रहे। उन्हीं के नाम से वे पचहचाने जाते हैं। वे कभी भी हमारे विचार नहीं बने, और वह आंदोलन भी हमारा आंदोलन नहीं बना।

मैंने सबसे पहले जयप्रकाशजी के दर्शन किये और उनका भाषण सुना तब मैं महाविद्यालय में पढ़ता था। विद्यार्थी दशा में विद्यार्थी—आंदोलन से मेरा निकट संबंध था। उस समय हरएक राजनैतिक दल का विद्यार्थियों के लिए पक्षनिष्ठ संगठन था। अपनी बुद्धि का उपयोग न कर स्फोटक की तरह काम करने वाले दो ही माध्यम माने जाते थे—एक विद्यार्थी और दूसरा मजदूर अथवा कामगार वर्ग। राजनैतिक नेताओं का अलिखित नियम था कि विद्यार्थी और कामगार संगठनों को अपनी शक्ति का प्रयोग तो करना है, किन्तु अक्ल या बुद्धि केवल राजनैतिक नेताओं से उधार लेनी है। इन संगठनों का केवल उपयोग किया जाता था। इसी कारण 1948 में यह विचार प्रस्तुत हुआ कि विद्यार्थियों का दलनिरपेक्ष ऐसा अखिल भारतीय संगठन होना चाहिए। 1948 में बेंगलोर में हुए अखिल भारतीय विद्यार्थी कांग्रेस की सभा में यह निर्णय लिया गया। भारतीय स्तर पर एक समिति नियुक्त हुई। उस समिति को एक ढांचा तैयार करना था। इस समिति के अध्यक्ष डॉ. जाकिर हुसैन थे। 'नेशनल यूनियन ऑफ स्टूडेण्ट्स' इस विद्यार्थी संगठन का स्वरूप आने पर अखिल भारतीय विद्यार्थी कांग्रेस का विसर्जन करने का निर्णय लिया गया था। इसके लिए एक

सलाहकार समिति का भी गठन किया गया। उसमें डॉ. राधाकृष्णन (उस समय यूनेस्को के अध्यक्ष थे), डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, जयप्रकाश नारायण, रफी अहमद किदवई, प्रो. डी. पी. मुखर्जी, प्रो. एस. के. जॉर्ज, प्रो. दांतवाला, प्रो. वाडिया और डॉ. अमरनाथ झा आदि मान्वयवर थे। जयप्रकाशजी ने इस संगठन कार्य में विशेष ध्यान दिया था। क्योंकि बिहार के विद्यार्थी आंदोलन के बारे में उन्हें चिन्ता थी। नेशनल यूनियन ऑफ स्टूडेण्ट्स का प्रथम अधिवेश सितंबर 1950 में मुम्बई के ब्रेबॉर्न स्टेडियम में हुआ था। इस अधिवेशन के उद्घाटन के लिए एक के बदले दो अतिथियों को बुलाया गया था। कांग्रेस से संबंधित छात्र चाहते थे कि पं. जवाहरलालजी उद्घाटन करें और समाजवादी विचारों के विद्यार्थियों का आग्रह जयप्रकाशजी के लिए था। पक्षनिरपेक्ष विद्यार्थी संगठन स्थापित करने वाले अपने राजनैतिक दल और नेता को भूलना नहीं चाहते थे। दोनों में एकमत न होने से अंत में समझौता होकर दोनों को बुलाया गया। उस समय जयप्रकाशजी ने भ्रष्टाचार पर हमला किया। उनके मतानुसार उस समय यानी 1950 में बिहार में लग्न-विवाह के बाजार में प्राध्यापक, डॉक्टर, न्यायाधीश, इनसे बढ़कर पुलिस अधिकारी, महसूल विभाग के नौकर, इनकी 'वर' के नाते ज्यादा मांग थी। दहेज के बाजार में उनका भाव भी बढ़ा-चढ़ा था। क्योंकि उनकी 'ऊपर की कमाई' वेतन से कई गुना ज्यादा थी। और वे निर्लज्जता से वह कमाई कितनी है, इसे विवाह के निश्चय के समय बताते थे। परीक्षा के अवैध मार्ग, बिना टिकट रेल प्रवास करने की प्रवृत्ति के विरोध में भी उन्होंने आवाज उठाई थी। इतना ही नहीं, विद्यार्थियों को अपने पिताजी और परिवार वालों के भ्रष्टाचार के विरोध में भी आवाज उठानी चाहिए, ऐसा आवाहन भी उन्होंने किया था। इतना ही नहीं तो 'जन्म' नाम के 'बायलॅजिकल अक्सीडेन्ट' के कारण जो जन्माश्रित सत्ता या प्रतिष्ठा तथा सम्पत्ति पर अधिकार मिलता है, उस पर का भी अधिकार या हक छोड़ देने की सलाह उन्होंने दी थी। हम सबने हाथ ऊपर उठाकर उनके साथ वैसा संकल्प भी किया था। जो वातावरण तथा भावना का परिणाम था। बाद में हम यह समझ गये कि संकल्प करने होते हैं। लेकिन उन्हें पालना ही चाहिए, ऐसा कभी भी माना नहीं जाता। पक्ष (दल) रहित विद्यार्थी संगठन स्थापित करने हम इकट्ठा हुए थे। किन्तु दलनिष्ठा ही हमें एकजुट करती थी। उसी आधार पर उस संगठन के चुनाव हुए। इस प्रकार पक्ष-निरपेक्षता धुल गयी। पक्षाभिमान बढ़ा-चढ़ा सिद्ध हुआ और उद्घाटित अधिवेशन ही समापन अधिवेशन ठहरा, क्योंकि अंततः विद्यार्थियों के प्रश्नों से बढ़कर पक्षनिष्ठा, दल के नेता और राजनैतिक दल ही महत्त्व के ठहरे। विद्यार्थी आंदोलन का यह खेदजनक अंत हुआ। यही भूमिका परम्परा से आज के विद्यार्थी संगठन भी चला रहे हैं। जो बोया वही उगा और पाया। आज भी दुर्भाग्य से युवक और विद्यार्थियों के सामने, हम जयप्रकाशजी की संपूर्ण क्रांति की या नव-निर्माण की भूमिका उपस्थित करने में या उसे प्राणवान बनाने में पहल भी नहीं कर सके। यही असल में चिन्तन और मनन का विषय है। 'स्वराज्य' की परिभाषा 'स्व-पर राज' यह है, और उसकी शुरुआत 'स्व' यानी 'स्वयं' से होती है, यह भी हम उन्हें नहीं समझा सके।

लेकिन क्रांतिकारियों की यह विशेषता होती है कि वे प्रतिकूल परिस्थिति में भी अनुकूलता खोजते हैं। उन्हें पर्यायी राजनीति के बदले राजनीति को ही पर्याय खोजने की आकांक्षा होती है। राजनीतिक 'स्वतंत्रता' तथा 'स्वराज्य' या मुक्ति ये भिन्न अर्थी और भिन्न धर्मी शब्द हैं। हर प्रकार के यानी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक गुलामी में से संपूर्ण मुक्ति मिले, यह जयप्रकाशजी के संपूर्ण क्रांति के आयाम थे। उसके लिए उनका सबसे अधिक विश्वास 'युवक' और विद्यार्थियों पर ही था। उनकी यह भावना थी कि युवक अन्याय, भ्रष्टाचार, अत्याचार किसी भी हालत में नहीं सह सकेंगे। इसीलिए शायद यूनेस्को के डायरेक्टर जनरल ने दो पीढ़ियों के अंतर को विशद करते हुए कहा था कि—

'The gulf between young and adult seems to be growing every day, not only with university but with society as a whole. With their needs for absolutes, the young are less than ever able to tolerate injustices and disorder of this world.'

अन्याय सहने की क्षमता और उसे नकारने की भूमिका इनमें जो अंतर है, वही दो पीढ़ियों में का अंतर है। और यह दिल्ली में अभी अभी जो बलात्कार का कांड हुआ, जिसे 'निर्भया बलात्कार कांड' के नाम से जाना जाता है, उस समय युवाशक्ति का जो उद्रेक हुआ, या 2014 के चुनाव में जिसका दर्शन हुआ उससे आज भी युवकों से आशा की जा सकती है। और, इसीलिए शायद जयप्रकाशजी का युवकों पर सबसे अधिक विश्वास था। और मेरी दृष्टि से यही आशा की किरण है। **क्रांति का यक्ष प्रश्न यह है कि जिसे क्रांति की आवश्यकता है, वह अगली पीढ़ी तथा पददलित, शोषित और परिवंचित मनुष्य क्रांति का अधिष्ठाता और अनुष्ठाता कैसे बने? लोकमान्य से लेकर लोकनायक तक सबकी यही उत्कण्ठा रही है, यही खोज रही है। जयप्रकाश के आंदोलन में एक सीमा तक इस पद्धति का आविष्कार हुआ। परन्तु वह प्रयोग अब तक उसके किनारे तक भी नहीं पहुंच सके हैं। क्रांति की जिसे आवश्यकता है, उसमें आकांक्षा भी नहीं जगी है, प्रेरणा तो दूर रही। इसलिए लोगों के पराक्रम से क्रांति करने के बारे में हमें अन्तर्मुख बनकर चिन्तन और संशोधन करना चाहिए। और उस दिशा में कदम उठाने चाहिए। लेकिन इसकी शुरुआत अपने आपसे और अपनी संस्था में से होनी चाहिए।** यही तो संपूर्ण क्रांति का प्रथम तथा अंतिम चरण है। और उसके सिवा संपूर्ण क्रांति के लिए अन्य पर्याय भी नहीं है। ❑

संपूर्ण क्रांति एवं वर्ग-संघर्ष

❑ डॉ. रामजी सिंह

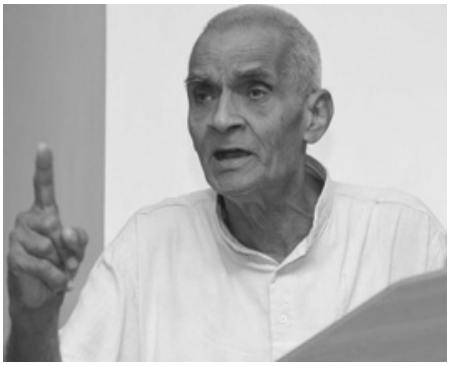

बापू से किसी ने प्रश्न पूछा ''जिस आदर्श की आप कल्पना करते हैं क्या वह शोषितों एवं शोषकों के बीच सहयोग से संभव है?...क्या भूमिहीनों एवं गरीबों को भूमिपतियों एवं पूंजीपतियों के खिलाफ प्रभावकारी ढंग से संगठित करने की जरूरत नहीं है?...क्या आप नहीं समझते हैं कि वर्ग-संघर्ष अवश्यम्भावी है और बहुजन हिताय की दृष्टि से निहित स्वार्थों की समाप्ति आवश्यक नहीं है?'' बापू ने कहा—''मैंने ऐसा कभी नहीं कहा है कि जब तक शोषण चलता रहेगा तब तक शोषकों एवं शोषितों के बीच सद्भाव एवं सहयोग संभव है। मैं केवल इतना ही मानता हूं कि न तो सभी पूंजीपति एवं जमींदार जन्मजात शोषक हैं और न मैं यह मानता हूं कि उनके एवं आम जनता के स्वार्थों में बुनियादी विरोध ही है।'' शोषित जब तक शोषकों के द्वारा किये जाने वाले शोषण में सहकार नहीं करेगा, शोषण चल नहीं सकता है। जो भी हो शोषण की परिसमाप्ति आवश्यक है, लेकिन उसके लिए भूमिपतियों एवं पूंजीपतियों के हौवे की जरूरत नहीं, उनके वर्तमान संबंधों में परिवर्तन लाने की जरूरत है, ताकि जनता के साथ उनका स्वस्थ एवं शुद्ध संबंध बन सके। ऐसा मानना कि भूपतियों एवं पूंजीपति वर्ग में किसी प्रकार की राष्ट्रप्रेम या लोक-कल्याण की भावना नहीं हो सकती है, शायद एक सफेद झूठ है। उनके हृदय के कोमल तंतुओं को भी यदि झंकृत किया जाये तो करुणा की रसधारा प्रवाहित हो सकती है। अतः यदि हम उनका विश्वास प्राप्त कर उनके साधन एवं शक्ति का समाजहित में उपयोग करें तो इससे जनता एवं समाज का अधिक हित होगा।

इसलिए बापू ने स्पष्ट कहा, ''वर्ग-संघर्ष की कल्पना मुझे कदापि प्रभावित नहीं करती है। भारत में तो वर्ग-युद्ध अवश्यम्भावी एवं अपरिहार्य नहीं ही है, यदि हम अहिंसा के संदेश को आम जनता तक ले जा सकने में समर्थ हो सके। यदि हम अमीरों को बता सके कि उनकी अमीरी तभी तक संरक्षित रह सकेगी जब तक वे गरीबों की भलाई के लिए उसका उपयोग करेंगे, वरना फिर अमीर एवं गरीब दो स्पष्ट वर्ग बन जायेंगे जिनके बीच टक्कर अनिवार्य होगी।

बापू की अहिंसा व्यापक थी और उन्होंने परिग्रह को भी हिंसा माना। इसीलिए परिग्रह के विरुद्ध संघर्ष उनके लिए अहिंसा के लिए ही धर्मयुद्ध था। यदि हत्या हिंसा है तो जमाखोरी, मुनाफाखोरी और चोरबाजारी भी हिंसा है। केवल खून-खराबी ही हिंसा नहीं है, विषमता भी हिंसा है, आवश्यकता से अधिक उपभोग भी हिंसा है। वैभव का वीभत्स प्रदर्शन और सीमाहीन व्यय वस्तुतः हिंसा की जड़ है। यही कारण था कि बापू और विनोबा, लोहिया-जयप्रकाश जैसे उनके अनुयायी समाज में व्यक्तिगत सम्पत्ति एवं परिग्रह के कारण दुर्व्यवस्था को कभी बरदाश्त नहीं कर सकते थे।

देश आजाद होने पर एक अमरीकी पत्रकार ने बापू से पूछा—''बापू, सदियों से शोषित भूमिहीनों को अब क्या कहेंगे?'' बापू ने छूटते हुए कहा—''मैं उनसे कहूंगा कि फाजिल जमीन पर वे कब्जा कर लें।'' भौचक्क अमरीकी पत्रकार ने कहा कि भूमिपतियों से क्या कहेंगे। बापू ने कहा—''मैं उनसे भूमिहीनों के साथ सहयोग करने को कहूंगा।'' बिड़ला बापू के बड़े ही प्रिय एवं निकट रहने वाले थे। बिड़लाजी ने मजाक करते हुए पूछा—''बापू आप जीवन भर तो अंग्रेजों के खिलाफ लड़ते रहे। अब तो वे चले गये, अब आपकी लड़ाई किनसे होगी?'' बापू ने तपाक से उत्तर दिया—''तुमसे।'' यानी बापू देशी पूंजीवाद के भी खिलाफ लड़ने की मुद्रा में थे। अहिंसा एवं सत्याग्रह केवल राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए ही व्यावहारिक नहीं था, बल्कि वह ''आर्थिक स्वराज्य'' के लिए भी सख्त उपकरण है। अहिंसा को बापू ने हिंसा से हमेशा श्रेष्ठ माना लेकिन अहिंसा और शोषण साथ-साथ नहीं चल सकता है, ऐसा उन्होंने माना। इसीलिए उन्होंने स्पष्ट कहा—**''भारत के स्वतंत्र होने के बाद यदि स्वेच्छापूर्वक अमीर लोग अपनी सम्पत्ति गरीबों में नहीं बांट देंगे तो फिर खूनी क्रांति अवश्यम्भावी है...। करुणामूर्ति विनोबाजी ने भी एक बार कहा कि ''यदि भूदान ग्रामदान की करुणामयी क्रांति सफल नहीं हुई तो बाबा के दोनों हाथों में नंगी तलवार मिलेगी।...इसलिए आज यदि डॉ. लोहिया एवं जे. पी. इस दुर्दान्त विषमता को कम होने की बजाय बढ़ते हुए देखकर वर्ग-संघर्ष की बात रखते हैं तो कोई आश्चर्य नहीं।** जिस देश की सम्पत्ति का 70% केवल 30% लोगों के हाथ में हो, जहां की नौकरियां एवं राजनैतिक स्थान के 85% मात्र 15% लोगों के जिम्मे हो एवं गरीब तबके के 90% लोग शिक्षा से वंचित हों, वहां वस्तुतः दो वर्ग बनते ही जायेंगे।

ऐसी स्थिति में वर्ग-संघर्ष चाहे उचित हो या नहीं, वह अपरिहार्य है। यदि राष्ट्र की सम्पत्ति के एक बड़े भाग को कुछ लोगों के हाथों से लेकर करोड़ों भूखे और अधनंगे लोगों को कुछ परितोष देना है और इस बेइंताहाई अंतर को नष्ट करना है तो या तो 'करुणा का साम्राज्य' पृथ्वी में आवे या गांधीजी का 'कानून सम्मत संरक्षता' का विचार हम मानें या फिर संपूर्ण विनाश के महाभारत को आमंत्रित करें। भूख के आगे व्यक्ति धर्म और भगवान को भी भूल जाता है। स्वयं राजर्षि विश्वामित्र ने भूख की अग्नि को शांत करने के लिए चांडाल के यहां मांस और वह भी कुत्ते का और जूठा खाकर प्राण बचाया था। इसलिए भूखी जनता के लिए करुणा का नहीं रोटी का उपदेश चाहिए। विवेकानन्द ने कहा है—"The crying need of the East is not want of religion but want of bread."

यही कारण है कि सत्याग्रह के क्षेत्र में एक नया आयाम लाया गया है जिसे जे. पी. ने 'अहिंसक वर्ग-संघर्ष' कहा है। मुक्त मस्तिष्क के होने के नाते जे. पी. ने सर्वोदय जगत में भूदान, ग्रामदान की प्रक्रिया में अपने अस्तित्व को विसर्जित कर दिया, लेकिन एक तरफ भूदान होता गया दूसरी तरफ भूमिहीनों को दी गयी भूमि की बेदखली भी होती रही। एक तरफ ग्रामदान की प्रक्रिया बढ़ते-बढ़ते 'बिहार-दान' तक आ पड़ी, दूसरी तरफ गांव में न तो विषमता कम हुई न सामाजिक विद्वेष ही घटा। इसलिए एक समाज विज्ञानी होने के नाते जे. पी. ने यह अनुभव किया कि अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया में कुछ ऐसे नये तत्त्वों को प्रविष्ट किया जाय, जिससे 'ग्राम-स्वराज्य' की कल्पना शीघ्र साकार हो सके और विषमता और अकिंचनता समाप्त की जा सके। चूंकि वर्ग-संघर्ष की कल्पना मार्क्स के दर्शन में सन्निहित है और उससे हिंसा का अन्योन्याश्रय संबंध है, इसलिए लोगों को यह समझ में नहीं आता कि 'शांतिपूर्ण और शुद्ध साधनों' के ऊपर इतना जोर देने वाले जे. पी. ने वर्ग-संघर्ष को कैसे अंगीकार किया। जयप्रकाशजी सत्य के साधक हैं और सत्य न तो प्राची के हाथ बिका है और न प्रतीची के हाथ। सत्य पर न तो किसी ग्रंथ विशेष का अधिकार है न वह व्यक्ति विशेष की ही बपौती है। समाज परिवर्तन के लिए हिंसा सैद्धांतिक रूप से तो असंगत है ही, जयप्रकाशजी उसे व्यावहारिक रूप से भी गलत मानते हैं, इसीलिए वे पीड़ित और पददलित मानवता रूपी असहाय एवं मूक दुख सहने वाले इस वर्ग की सुरक्षा और जीवन रक्षा के लिए वर्ग-संघर्ष का विचार तो रखते हैं लेकिन उसमें हिंसा का समावेश नहीं होने देते। गांधीजी और जयप्रकाशजी संघर्ष के विरोधी नहीं। **सत्याग्रह भी तो संघर्ष ही है और बापू और जे. पी. ने तो आजीवन संघर्ष ही किया है। वर्ग-संघर्ष की भावना एवं कल्पना ने जे. पी. को इसलिए भी खींचा है कि आज की चाहे दक्षिणपंथी, वामपंथी जो भी राजनीति हो सभी निहित स्वार्थों की क्रीतदासी है। गरीबों का नाम लेकर भले ही हम सभी राजनैतिक लाभ प्राप्त करते हैं, किन्तु गरीबों के हाथ गरीबों का नेतृत्व जा नहीं पाता है।** सर्वहारा की तानाशाही के नाम पर साम्यवादी देशों में भी सर्वहारा की नहीं, बल्कि सर्वहारा की छाती पर तानाशाही लाद दी गयी है। इसलिए यह आवश्यक है कि गरीबों को दुर्भेद्य संगठन खड़ा किया जाए ताकि उसमें उन्हीं का नेतृत्व प्रस्फुटित और विकसित हो और कोई भी उन्हें दिग्भ्रमित नहीं कर सके। दुखी की पीड़ा दुखी ही समझ सकता है इसलिए भी आवश्यक है कि हमें समाज के उन लोगों का वर्ग-संगठन खड़ा करना चाहिए, जिनका स्वत्व छिन गया है। जिनके ऊपर आसमान की नीली चादर तो है, लेकिन जिन्हें मातृभूमि के नाम पर रहने के लिए भूमि तक नहीं। जब तक इनका संगठन नहीं होगा, तब तक इनके दुख को भगवान भी नहीं दूर कर सकता। भगवान ने स्वयं ही कहा है, 'उद्धारेदात्मात्मानं' अपनी आत्मा का स्वयं उद्धार करो। भगवान बुद्ध ने भी कहा है 'अप्पदीपोभव' 'अत्ताहि अत्तनो नाथो'। प्रभु मसीह ने भी कहा है अपना प्रकाश स्वयं बनो—"Be a lamp into yourself" इसलिए आज वर्ग संगठन परम आवश्यक है।

अहिंसा और करुणा को भारतीय संस्कृति का मूलाधार बताने वाले यह भूल नहीं जायें कि अहिंसा का मेरुदंड 'अपरिग्रह' और 'अस्तेय' व्रत है, जिस दिन से भारतीय मनीषा ने 'अपरिग्रह' और 'अस्तेय' का निरादर किया; जिस दिन से परोपकार, दया केवल शब्दकोश में रह गये, जिस दिन से 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' आदि केवल पांडित्य और प्रवचन के लिए रह गये उस दिन से ही लोगों के हृदय में वर्ग-संघर्ष की भावना प्रतिष्ठित हुई। इसलिए या तो हम कृष्णरूपी बापू और जयप्रकाश की भावना को समझ कर स्वेच्छापूर्वक अतिरिक्त सम्पत्ति अपने दुखी भाइयों में बांट दें, अन्यथा महाभारत रूपी महानाश की तैयारी करें—और कोई विकल्प नहीं। अहिंसा जब तक कमजोरों की होकर रहेगी और अहिंसा से जब तक निहित स्वार्थी का पोषण और शोषण होता रहेगा तब तक अहिंसा निस्तेज और निर्वीय रहेगी। इसलिए अहिंसा को तेजस्विता और क्रांतिकारी यथार्थता देने के लिए जयप्रकाशजी ने वर्ग-संघर्ष की कल्पना देकर वस्तुतः शिव की तरह गरलपान करने का काम किया है। शिव औघड़ हो सकता है, लेकिन शिव कल्याणकारी ही रहेगा उसी प्रकार जे. पी. ने वर्ग-संघर्ष के साथ अहिंसा रूपी अमृत का संस्पर्श करा कर इसकी अकल्याणकारिता को समाप्त कर इसे सर्वमंगलकारी बना दिया है। इसके सिवा अभी समाज परिवर्तन का कोई दूसरा रास्ता नहीं—न अन्यपंथा। ❑

परिवर्तन : 1974 बनाम 2015

संपूर्ण क्रांति के कारण पिछड़ों-दलितों में गहरी चेतना जगी

❑ कल्पना अशोक

संपूर्ण क्रांति का गज अन्त्योदय!

जब संपूर्ण क्रांति होगी, तभी सर्वोदय होगा। और सर्वोदय जहां नहीं है वहां संपूर्ण क्रांति नहीं है। वास्तव में जो दबे हुए हैं उन्हें ऐसा लगे कि हमारे लिए नया विहान हुआ है और हमको एक ऐसा मौका मिला है कि हम अपनी पीठ सीधी कर सकें; अपने अधिकारों के लिए मांग कर सकें, अपने अधिकारों के लिए लड़ सकें। जो सबसे गरीब और असहाय है उसकी चिन्ता और उसका उदय सबसे पहले हो, यही न्याय है। इसी गज से हमें अपना हर काम नापना चाहिए। –जेपी

मुझे दुख है कि पिछले दशकों में पिछड़े वर्ग द्वारा आयोजित रैलियों और उनके आक्रामक तेवर पर कई विद्वान टीकाकारों ने कई तरह की टिप्पणियां की हैं किन्तु जेपी ने यह महसूस किया था कि वर्ग संगठन के छोर से भी यदि काम किया जाय तो पिछड़े वर्गों को अपने गौरव व हैसियत का भान होगा तथा वर्गों के बीच उपस्थित स्वार्थ-संघर्ष को शांतिमय दिशा दी जा सकेगी। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा, ''मैं समझता हूं कि अब बिहार के गांवों में 90 फीसदी गरीब हैं तो उन गरीबों के संगठन और उनके संघर्ष को वर्ग-संघर्ष कहकर अमान्य नहीं किया जा सकता।'' यह मैं मानती हूं कि अभी तक इस प्रकार का संघर्ष वर्तमान संघर्ष (बिहार आंदोलन) के दरम्यान गांव में छिड़ा नहीं है लेकिन उसका छिड़ना अनिवार्य है यदि यह संघर्ष (बिहार आंदोलन) जनसंघर्ष है और अपने उद्दिष्ट स्थान पर पहुंचने की आशा रखता है।

जेपी ने जब बिहार आंदोलन के दौरान वर्ग-संघर्ष की बात की तो कई लोगों को अटपटा-सा लगा। लगा कि वे शायद हिंसा की बात कर रहे हैं किन्तु नहीं वे तो भविष्य की आसन्न घटनाओं से हमें सावधान कर रहे थे। गांधी की पुण्यतिथि 30 जनवरी 1979 को भी जेपी ने गांधी को स्मरण करते हुए स्पष्ट शब्दों में हमें हिदायतें दी—''हमें याद रखना चाहिए कि स्वतंत्रता मिलने के तीन दशक बाद भी जो भूखे और नंगे रह गये हैं, वे अब और प्रतीक्षा नहीं करेंगे। अपने पापों को ढंकने मात्र के लिए गांधी की पूजा न की जाय। यह एक ऐसा खतरनाक खेल है जिसमें पराजय ही मिलती है।'' इसके बावजूद हम आज भी उसी खतरनाक खेल में लगे हैं। सबल हाथ कमजोर हाथों को थामने के बजाय उसे मरोड़ना चाहता है। इसी परिप्रेक्ष्य में महान विचारक एवं सर्वोदयी नेता धीरेन्द्र मजूमदार ने जेपी के वर्ग-संघर्ष की बड़ी सटीक परिभाषा की। तत्त्व की दृष्टि से अभी भी मेरा विचार वर्ग-संघर्ष नहीं, वर्ग-सम्मिलन का है। लेकिन विचारक (जेपी) को विशेष परिस्थिति में विशेष प्रकार से सोचना पड़ता है। हम मानते हैं कि सर्वोदय अन्त्योदय से शुरू होगा। सवाल है, यह हो कैसे? ऊपर के लोग हाथ बढ़ाकर अंतिम व्यक्ति को खींचकर उनका उदय नहीं करना चाहते बल्कि उन्हें और अधिक दबाना चाहते हैं। ऐसी हालत में अंत काल तक दबते-दबते उनके समाप्त हो जाने से पहले, वे सचेतन प्रयास द्वारा अपने आप ऊपर उठने का संघर्ष करें। चूंकि मैं ऐसा मानता हूं इसलिए जयप्रकाशजी ने जो वर्ग-संघर्ष की घोषणा की है, उसे मैं सामयिक मानता हूं।

बिहार में आज जो दलितों/पिछड़ों के हाथ विभिन्न रैलियों के माध्यम से उठ रहे हैं वे उनके सचेतन प्रयास है। ये पिछड़ी-दबी जातियां जो अलग-अलग समूह बनाकर समाज में ऊंचा स्थान प्राप्त करने का प्रयास कर रही है वह समाज में ऐसी स्थिति पैदा करने का प्रयास है जिसमें पिछड़ों को समान स्थितियां प्राप्त हो जाय। इसके लिए ये जातियां अपनी योग्यता, अपनी स्थिति, मनोवृत्ति तथा रहन-सहन में परिवर्तन लाने के लिए प्रयत्नशील हैं जिससे 'सामाजिक परिवर्तन' को बल मिलता है। आज जो बिहार में या यूं कहें पूरे देश में कमोबेश जातियां अब उच्च और निम्न समूहों में संगठित होने लगी हैं, वे इन समूहों के भीतर कार्यात्मक रूप में एक-दूसरे के सहयोगी बन रहे हैं, यह संपूर्ण क्रांति आंदोलन की देन है।

डॉ. लोहिया के अनुसार ''वर्ग तथा जाति के रूपांतर का चक्र चलता रहता है। चलायमान जाति को वर्ग और जड़ वर्ग को जाति कहते हैं।'' इसमें शक नहीं कि आज की स्थिति में पिछड़ी जातियां चलायमान हैं और इसलिए कई एक वर्ग बनकर उच्चता की स्थिति प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील भी हैं। समाज और सत्ता में पिछड़ों द्वारा हिस्सेदारी का जितना प्रखर एवं सार्थक प्रयास पिछले दशकों में देखने को मिला है ऐसा पहले कभी नहीं दिखा। बिहार आंदोलन के गर्भ से निकली जनता पार्टी की सरकार और उसके नेता स्व. कर्पूरी ठाकुर द्वारा यदि पिछड़ों को आरक्षण न दिया जाता, विश्वनाथ प्रताप सिंह की केन्द्रीय सरकार द्वारा मंडल कमीशन की अनुशंसाएं यदि स्वीकार नहीं की जाती और लालू, मुलायम, मायावती जैसे पिछड़े-दलित नेताओं द्वारा उसे लागू कर पिछड़ों-दलितों में सामाजिक-राजनैतिक चेतना जगाने के लिए सामाजिक न्याय आंदोलन पर बल न दिया जाता तो पिछड़ों-दलितों में जो पुनर्जागरण आज दिख रहा है, नजर नहीं आता।

इसलिए मैं पिछड़ों के नवजागरण को इतिहासकार डॉ. रामविलास शर्मा की तरह

मात्र जमींदारी का उन्मूलन नहीं मानती क्योंकि जमींदारी जाने से समाज में व्याप्त सामंती प्रवृत्तियां मरी नहीं हैं। जमींदारी उन्मूलन से पिछड़ों के कंधे से जुआ तो अभी तक उतरा ही नहीं। जमींदारों की संख्या कम हुआ करती थी और कुछ एक अपवादों को छोड़ ये जमींदार न केवल शासक बल्कि बहुत हद तक रैयतों के पालक भी हुआ करते थे। आज जो भारी संख्या में नवसामंत 'एलिट्स' पैदा हुए हैं वे पुरानी सामंतवादी व्यवस्था को बनाये रखने के लिए भारी षड्यंत्र कर रहे हैं। वे तो एक सूई नोक भर सत्ता, जमीन और सामाजिक प्रतिष्ठा बांटने के हिमायती नहीं दिखते। यहां तक कि वे कभी पिछड़ों को दिये जाने वाले आरक्षण का तो कभी सत्ता में उनकी भागीदारी के प्रयास का न केवल विरोध करते हैं बल्कि उनके हर प्रयास को नाकामयाब करने की हर चेष्टा करते हैं। मैं समझती हूं कि इसी सामाजिक-आर्थिक असमानता बनाये रखने की वर्तमान परिस्थिति से पिछड़ों का पुनर्जागरण हुआ है।

इस नवजागरण की तीव्रता 1974 के 'संपूर्ण क्रांति आंदोलन' के बाद पिछले तीन-चार दशकों से सर्वाधिक अनुभव की गयी है। विभिन्न रैलियों के माध्यम से जैसा डॉ. शर्मा कहते हैं, यदि सत्ता के इर्द-गिर्द इकट्ठा होने का प्रयास किया जा रहा है तो इसे उनका कोई अनर्गल प्रलाप या प्रयास नहीं कहा जा सकता। आखिर पिछड़ों के नवजागरण से हमारी अपेक्षाएं भी क्या है कि पिछड़ों को चाहे जो मिल जाये सिर्फ उसे उसके भाग्य खुलने की चाबी जो सत्ता की बागडोर है, न मिले?

महान् समाजवादी डॉ. लोहिया ने समाजवादी आंदोलन के दौरान विचारधारा के आधार जिस बात पर सर्वाधिक जोर दिया, वह था समाज के पिछड़े वर्ग को आगे लाना तथा उसके हाथ में शासन और नेतृत्व की बागडोर देना। किन्तु समाजवादी दल की यह बिडम्बना ही कही जायेगी कि उसने उन्हीं मान्यताओं और मूल्यों को अपनाया जिनको लोहिया ने अपनी आलोचनाओं का केन्द्र बिन्दु बनाया था। इसलिए समाजवादी पार्टी के विघटन का सबसे प्रमुख कारण यह रहा कि इसका नेतृत्व हमेशा उच्च वर्ग के हाथों में रहा। इस वर्ग के नेतृत्व को व्यापक आधार नहीं दिया गया या यूं कहें कि नेतृत्व के घेरे में पिछड़े वर्ग—यादव, कोइरी, कुर्मी, कुम्हार, कुनबी, नाई आदि में जागृति आयी किन्तु जब इस वर्ग ने नेतृत्व प्राप्ति की कोशिश की तो उन्हें सफलता नहीं मिली या भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कई प्रांतों में कुछ ऐसे भी मौके आये, जब मुख्यमंत्री बनाने के प्रश्न पर समाजवादी पार्टी के अंग्रेजों ने नेतृत्व पिछड़े वर्ग को देने की बजाय उच्च वर्ग को प्रदान किया। यानी समाजवादी आंदोलन दोनों ही दृष्टिकोण से असफल रहा। पहला यह आंदोलन विचारधारा तथा सैद्धांतिक सशक्तता बरकरार नहीं रख पाया तथा दूसरा शासन और सत्ता की बागडोर पिछड़ों के हाथ में नहीं दे पाया। अंततः लोहियाजी द्वारा सुझाये गये आधारों तथा मूल्यों को छोड़ देने के कारण समाजवादी आंदोलन लगभग खत्म-सा हो गया।

लोहियाजी का कहना था—''पिछड़े वर्ग को प्रशासन करने का अवसर दिये बगैर उनमें कुशलता की आशा करना व्यर्थ होगा। हो सकता है कि सौ को बैठायेंगे तो उनमें 60-70 निकम्मे निकलेंगे। लेकिन जो 30 अच्छे निकलेंगे, वे सारे समाज में एक इतनी जबर्दस्त हलचल पैदा करेंगे कि जैसे आंटे में खमीर मिलते हैं, वैसे सारे समाज को पुनर्जीवित कर देंगे।'' मुलायम, लालू, नीतिश, मायावती, रामविलास को कमोबेश इसी श्रेणी में रख सकते हैं।

डॉ. लोहिया की मृत्यु के कुछ ही समय पूर्व जब जेपी और लोहियाजी की मुलाकात हुई तो कहा जाता है कि दोनों गहरे मित्र अत्यन्त भाव-विह्वल हो उठे। जेपी का हाथ थामकर लोहियाजी ने उनमें पूरा विश्वास व्यक्त करते हुए कहा था, जेपी ही पुनः पूरे देश को एकबार और झकझोरेंगे। डॉ. लोहिया जिस समाज की स्थापना के लिए आजीवन संघर्षरत रहे यदि वे आज जीवित होते तो यह देख फूले नहीं समाते कि उनके अधूरे काम को उनके मित्र ने संपूर्ण क्रांति आंदोलन (जिसे जेपी ने लोहियाजी की सप्तक्रांति के समान कहा था) के माध्यम से कितना आगे बढ़ा दिया। जेपी के संपूर्ण क्रांति आंदोलन की ही देन रही है जनता पार्टी और जनता दल की सरकारें जिसके नेतृत्व की बागडोर संभालने वाले स्व. कर्पूरी ठाकुर तथा लालू प्रसाद स्व. लोहियाजी की मान्यता के अनुसार उनके 100 में से 30 अच्छे थे, जिन्होंने पूरे समाज में एक जबर्दस्त हलचल मचा दी और पूरा समाज ऐसे पुनर्जीवित हो उठा जैसे आटे में खमीर मिलते हैं। यह हमें स्वीकार करना ही चाहिए कि संपूर्ण क्रांति का आरोहण जारी है और इस आंदोलन के कारण ही पिछड़ों-दलितों में गहरी चेतना जगी है। पिछड़े वर्ग की रैलियां इस समाज के पुनर्जीवित होने की निशानी हैं। इस संगठित ताकत पर उंगलियां उठना या उसका प्रतिरोध तो स्वाभाविक है। जेपी ने इन प्रतिरोधों के बावजूद उन्हें संगठित होने का ही संदेश दिया है।

''नीचे के लोगों की ऐसी संगठित ताकत का ऊपर के लोग प्रतिरोध करेंगे। उस कष्ट, बलिदान के लिए तैयार रहना चाहिए। आज भी क्या कम कष्ट, दमन, अत्याचार है नीचे वाली जातियों पर, वर्गों पर? आज वे असंगठित स्थिति में इसे भोगते हैं, इसलिए उनमें से कोई ताकत पैदा नहीं होती है। संगठित रूप से अन्याय का प्रतिकार करते हुए, दमन, कष्ट झेलना, 'सामाजिक परिवर्तन' की ताकत बन जाता है।''

पिछड़ों की रैलियों तथा उनके पुनर्जागरण को हमें इसी दृष्टि से देखना चाहिए कि यह संपूर्ण क्रांति के 'सामाजिक परिवर्तन' की एक ताकत है। जहां तक पिछड़े-दलित नेताओं को इन जातीय रैलियों के चक्रव्यूह में फंसने का प्रश्न है यह चक्रव्यूह ही उनके द्वारा सजाया गया है इसलिए इसमें फंसेंगे वे लोग जिन्होंने सदियों से परम्परागत जाति व्यवस्था और जमीन को समाज में अपने दबदबे एवं प्रतिष्ठा का परिचायक बनाकर सत्ता का भोग अकेले करते हुए सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक भेदभाव बरतते रहे और जिन्हें सामाजिक न्याय में विश्वास ही नहीं है। ❑

* *लेखिका 1974 आंदोलन की सिपाही, वरिष्ठ पत्रकार एवं बिहार प्रदेश सर्वोदय मंडल की पूर्व अध्यक्ष हैं।*

अनुत्तरित प्रश्न

संपूर्ण क्रांति का अर्थ

❑ किशन पटनायक

गांधी-विनोबा-जेपी के अनुयायियों के सामने यह एक प्रश्न 1983 से खड़ा है, जो अब तक अनुत्तरित है। क्या हम इन प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़ पाये हैं? अगर नहीं तो हमें ढूंढ़ना चाहिए और इन आलोचनाओं को हमें शांत भाव से ग्रहण कर उनका सम्यक उत्तर देना चाहिए। इसी आशा के साथ यह अनुत्तरित प्रश्न प्रस्तुत है। **–कार्य. सं.**

संपूर्ण क्रांति को वास्तविक अर्थ देने का काम नहीं हो सका है। इसका नतीजा यह है कि संपूर्ण क्रांति की घोषणा करने वालों की क्रांतिकारी छवि या विश्वसनीयता नहीं बन सकी है। जयप्रकाश नारायण के सारे समर्थक और प्रशंसक मौका मिलने पर संपूर्ण क्रांति का समर्थन करते हैं और अपने उद्देश्यों में शामिल कर लेते हैं। चन्द्रशेखर की जनता पार्टी से लेकर अटल बिहारी की भारतीय जनता पार्टी तक और छात्र युवा संघर्ष वाहिनी, समता संगठन, सर्व सेवा संघ, लोकायन तथा एवार्ड या स्वराज संगम इकाइयां भी संपूर्ण क्रांति को अपने उद्देश्यों में सम्मिलित कर लेती हैं। अगर इन सबको एक परिसर में रख लिया जायेगा तो किसी विदेशी पर्यवेक्षक को लग सकता है कि यह रूस विरोधी और पश्चिम-परस्त एक राजनैतिक खेमा है। यह भ्रम संपूर्ण क्रांति के 'वाहकों' को देखकर होगा।

वैसे छवि की चोरी कोई भी कर सकता है। अगर एक शब्द आकर्षक या प्रभावकारी लगता है तो उसकी चोरी होगी, लेकिन कोई एक भी गंभीर समूह इस शब्द को गंभीर रूप से विचार और व्यवहार द्वारा परिभाषित करता तो या तो दूसरों की चोरी पकड़ी जाती या उस शब्द और परिभाषा को फैलाने की हिम्मत अक्रांतिकारी या प्रतिगामी लोग नहीं करते।

संपूर्ण क्रांति अभी तक किंचित काल्पनिक विचारधारा का एक नामकरण है और इस तरह से सोचना कि इस शब्द के पीछे 'जे. पी. के मन में क्या रहा होगा' और 'अगर वे जीवित रहते तो इसको किस पकार परिभाषित करते', एक निष्फल चर्चा है। जो समूह इस शब्द का इस्तेमाल आंतरिकता के साथ करते हैं, वे अपने विचार और व्यवहार द्वारा ही इस शब्द को अर्थवान् बना सकते हैं। इस प्रकार की अपेक्षा शायद वाहिनी, सर्वोदय या समता संगठन के लोगों में थी। लेकिन अभी तक ये समूह इस शब्द को परिभाषित करने में असमर्थ रहे हैं। अगर संपूर्ण क्रांति एक विचारधारा है तो इस विचारधारा के व्यावहारिक धरातल पर असफल रहने के निम्नलिखित लक्षण हैं :—

(1) इस विचारधारा को मानने वाले समूहों के द्वारा व्यापक जनसंगठन का काम नहीं हो पा रहा है। अगर कुछ समूह जनसंगठन बनाने की विशेष कोशिश करते हैं तो वह कुछ 'पाकेट' मात्र बना पाते हैं। कहीं इस प्रकार का 'पाकेट' बनता है तो पूरे समाज की व्यवस्था को या आसपास के इलाके को कोई चुनौती नहीं मिलती कि यह फैलेगा।

(2) संपूर्ण क्रांति को अपनाने वाले अपने अधिकांश स्थलों पर जन संघर्ष की धारावाहिकता नहीं रख पाते हैं। जहां वे रहते हैं वहां कोई गतिविधि निरंतर नहीं होती है। वे किसी 'पाकेट' में जाकर ही सक्रिय होते हैं।

(3) राष्ट्र और दुनिया में जो महत्त्वपूर्ण घटनाएं हो जाती हैं या चर्चा के प्रश्न आते हैं, उन पर दखल देने या प्रतिक्रिया बतलाकर पूरे समाज के जन मानस पर हावी होने की कोई व्यग्रता संपूर्ण क्रांति वालों में नहीं दीखती। अकसर यह बहाना बनता है कि उनकी बात छपेगी नहीं। लेकिन जिस समूह के अंदर कुछ कहने और प्रचारित करने की छटपटाहट होगी वह अपना प्रचार यंत्र भी पैदा करता है।

(4) आधुनिक काल में किसी भी क्रांतिकारी समूह को विचार और कार्यक्रम के केन्द्र में प्रचलित आर्थिक व्यवस्था के खिलाफ एक रणनीति होनी चाहिए। उस व्यवस्था के खिलाफ किन-किन बिन्दुओं पर जनता को सक्रिय और जुझारू रूप से संगठित करना है, इसकी समझदारी स्पष्ट और सक्रिय होनी चाहिए। संपूर्ण क्रांति वाले कभी-कभी क्रांति के दूसरे पहलुओं को उजागर करने के क्रम में आर्थिक पहलू को भूल जाते हैं। जब अपने विचारों को स्पष्ट करने की मांग होती है तो दकियानूसी साम्यवादी अवधारणाओं को ही दोहराकर उसके साथ शांतिमयता या विकेन्द्रीकरण को जोड़कर कुछ कह देते हैं।

(5) उपरोक्त कमियां प्रारंभिक कमियां भी हो सकती हैं। लेकिन 1983 में यह लगता है कि इन कमियों को दूर करने के गंभीर प्रयासों की भी कमी है। इन समूहों के कार्यकर्ताओं का जीवन क्रांतिकारी सांचे में ढल नहीं पा रहा है। समता संगठन पूर्णकालिक कार्यकर्ता पैदा करने में अभी तक असमर्थ रहा है। वाहिनी के पूर्णकालिक कार्यकर्ता तीस साल की उम्र में एकाएक निष्क्रिय जैसे होने लगते हैं या यह भी देखा जाता है कि किसी दूसरी धारा के साथ जुड़ने की कोशिश करते हैं। जब सर्वोदय के कुछ नेताओं ने स्वराज संगम नाम की संस्था बनाकर 'मुक्ति आंदोलन' की घोषणा की, तब इस घोषणा पत्र को पढ़कर यह एहसास हुआ था कि शायद सर्वोदयी लोगों में एक नवजागरण होगा और उससे जनता के नवजागरण की संभावना भी निकल सकती है। अक्टूबर में उन्होंने जिस कार्यक्रम की घोषणा की वह आकर्षक थी। शहर बड़े उद्योग और बाहरी उद्योगों के विरुद्ध और ग्रामीण स्वावलंबन के पक्ष में एक तीव्रता की अभिव्यक्ति थी। हालांकि साम्राज्यवादी उत्पादन प्रणाली या बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ कोई उद्‌गार या संकल्प नहीं था। सर्वोदयी सारे देश में छाये हुए हैं, लेकिन यह कार्यक्रम कहीं भी उल्लेखनीय ढंग से पालित नहीं हुआ। कारण यह है कि सर्वोदय के लोग जब ग्रामोद्योग या ग्रामीण स्वावलंबन की बात कहते हैं, तो उसमें कोई व्यापक संघर्ष की कल्पना अभी भी नहीं जुड़ पायी है। एक तरफ ग्राम के स्वावलंबन के बारे में अतिवादी बात कही जाती है तो दूसरी ओर सरकारी और विदेशी एजेंसियों से अनुदान लेकर अपने मुख्य कार्यक्रमों को इन अनुदानों की परिधि में निर्धारित करने की कोशिश की जाती है। ऐसी स्थिति में 'स्वराज संगम' एक भ्रामक कल्पना लगता है, क्योंकि इन अनुदानों के पीछे बहुराष्ट्रीय कंपनियां और साम्राज्यवादी तत्त्वों का हाथ है। पिछले दशक में सर्वोदय के पास जितने आदर्शवादी, मेधावी किस्म के नौजवान सार्वजनिक कार्यों के लिए आये हैं, उनको सर्वोदय में रहकर इस प्रकार के अनुदानों के भ्रमजाल में न पड़ने और सुखी आरामदेह जीवन बिताने के मोह से विरत रहने का प्रशिक्षण नहीं दिया गया है। स्वराज संगम इससे मुक्त होने की प्रक्रिया नहीं बन सका है।

(6) सबसे निर्णायक कमी यह है कि संपूर्ण क्रांति की अपनी कोई सत्ता-राजनीति विकसित नहीं हो पा रही है। घुमा-फिराकर उनमें से अधिकांश जनता पार्टी की राजनीति के या गैर-साम्यवादी विपक्षी मोर्चा के समर्थक बनकर रह जाते हैं। संगठन के प्रारम्भिक दिनों में यह एक मजबूरी हो सकती है लेकिन भविष्य के विकास के कुछ लक्षण दिखायी देने चाहिए। ❑

नागार्जुन की 74 आंदोलन की कविताएं

इन्दूजी! क्या हुआ आपको?

इन्दुजी! क्या हुआ आपको?
सत्ता की मस्ती में
भूल गयीं बाप को!

छात्रों के खून का चस्का लगा आपको,
काले-चिकने माल का मस्का लगा आपको,
किसी ने जो टोका, तो ठस्का लगा आपको,
बेटे को याद रखा, भूल गयीं बाप को,
क्या हुआ आपको?
रानी महारानी आप!
नवाबों की नानी आप!
सेठों दलालों की अपनी सगी माई आप;
काले बाजार की कीचड़ और काई आप!
सुन रहीं, गिन रहीं,
हिटलर के घोड़े की एक-एक टाप को।
बेटों को तार दिया बोर दिया बाप को।
बचपन में गांधी के साथ रहीं,
तरुणाई में टैगोर के पास रहीं,
उलट दिया फिर कैसे, संगत की छाप को!
क्या हुआ आपको?

वो नहीं आयेंगी तुम्हें देखने

तुम तो नहीं गयी थी आग लगाने,
तुम्हारे हाथ में तो पेट्रोल का गीला चिथड़ा नहीं था।
आँचल की ओट में तुमने तो हथगोले नहीं छिपा रखे थे।

भूखवाला भड़काऊ परचा भी तो नहीं बाँट रही थी तुम
दातौन के लिए नीम की टहनी भी कहाँ थी तुम्हारे हाथ में
हाय राम, तुम तो गंगा नहाकर वापस लौट रही थी।
कंधे पर गीली धोती थी, हाथ में गंगाजल वाला लोटा था
बी. एस. एफ. के उस जवान का क्या बिगाड़ा था तुमने?
हाय राम, जाँघ में ही गोली लगनी थी तुम्हारे!
जिसके इशारे पर नाच रहे हैं हुकूमत के चक्के
वो भी एक औरत है।

वो नहीं आयेगी अस्पताल में तुम्हें देखने
सीमान्त नहीं हुआ करती एक मामूली औरत की घायल जाँघ
और तुम शहीद सीमा-सैनिक की बीबी भी तो नहीं हो
कि वो तुमसे हाथ मिलाने आयेंगी।

(मार्च, 1974 में बिहार-छात्र आंदोलन के समय कर्फ्यू में एक महिला को गोली लगने के संदर्भ में लिखी गयी कविता)

1974 संपूर्ण क्रांति आंदोलन के नारे

- सच कहना अगर बगावत है, तो समझो हम भी बागी हैं।
- समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध।
  जो तटस्थ है, समय लिखेगा उनका भी अपराध॥
- हमला चाहे जैसा होगा, हाथ हमारा नहीं उठेगा।
- होंगे दक्षिण, होंगे वाम, जनता को रोटी से काम।
- हम विद्यार्थी भाई-भाई, हमीं मिटायेंगे महँगाई।
- नया जमाना नयी जवानी, हम देंगे अपनी कुर्बानी।
- जयप्रकाश की यही पुकार, दूर करो यह भ्रष्टाचार।
- लोक व्यवस्था जाग रही है, भ्रष्ट व्यवस्था काँप रही है।
- जब तक भूखा है इनसान, नहीं रुकेगा यह तूफान।
- सस्ती रोटी सबको काम, नहीं तो होगा चक्का जाम।
- बन्द न होगी कलम जबान, जब तक भूखा है इनसान।
- तड़प रहा है आज समाज, यह स्वराज जो नहीं सुराज।
- लाठी-गोली की बौछार, सहने को हम हैं तैयार।
- संगीनों में जोर नहीं, हम छात्र कमजोर नहीं।
- भूखी जनता अब जाग उठी है, खाली पेटों से आग उठी है।
- बदले शिक्षा बदले राजे, चाह रहा है यही समाज।
- नहीं हमारी पार्टी कोई, नहीं हमारा दल है।
- मानवता की सेवा ही बस, एक हमारा बल है॥
- हम भारत की नारी हैं, फूल नहीं चिनगारी हैं।
- जेल का फाटक टूटेगा, मेरा भाई छूटेगा।
- बेटा कार बनाता है, माँ बेकार बनाती है।
- हिन्दू-मुस्लिम-सिख-ईसाई, सबके घर में है महँगाई।
- रानी तेरे राज में, बच्चे भूखे नंगे हैं।
- जिस देश में औरत रानी है, उस देश की औरत भूखी है।
- पटना हो या गोहाटी, अपना देश अपनी माटी।
- अलग भाषा अलग वेश, फिर भी अपना एक देश।
- छात्र उठे हैं अब ललकार, नहीं चलेगा भ्रष्टाचार।
- मेहनत करके पढ़ने दो, हमको आगे बढ़ने दो।
- देश-द्रोहियों सावधान, जाग उठा है हिन्दुस्तान।
- हिंसा करती है सरकार, शांति हमारा है हथियार।
- ऐसी गोली नहीं बनी, जो जनता को तोड़ सके।
- ऐसी लाठी नहीं बनी, जो आंदोलन मोड़ सके॥ ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार, कार्य.संपादक : अशोक मोती। छपी प्रतियाँ : 1450